# जगजीवन साहब की शब्दावली

## [ दूसरा भाग ]

जिसमें

उन महात्मा के अति उत्तम शब्द—३० बिरह और प्रेम अंग के, ६२ उपदेश के, २४ भेद के, १७ साध महिमा और असाध की रहनी के, ८ आरती के, ६ मंगल के, ३ सावन व हिंडोला के, ७ वसंत के, २६ होली के, और ६६ मिश्रित अंग के छपे हैं, और शिष्यों के नाम ५ शिक्षा-पत्र और कुछ साखियाँ भी दी हुई हैं।



प्रकाशक

बेलवेडियर प्रेस, प्रयाग

दूसरी बार ]

# ॥ संतबानी ॥

---

संतबानी पुस्तक-माला के छापने का अभिप्राय जगत-प्रसिद्ध महात्माओं की बानी और उपदेश को जिन का लोप होता जाता है बचा लेने का है। जितनी बानियाँ हमने छापी हैं उन में से विशेष तो पहिले छपी ही नहीं थीं और जो छपी थीं सो ऐसे छिन्न भिन्न और बेजोड़ रूप में या क्षेपक और त्रुटि से भरी हुई कि उन से पूरा लाभ नहीं उठ सकता था।

हमने देश देशान्तर से बड़े परिश्रम और व्यय के साथ हस्तलिखित दुर्लभ ग्रन्थ या फुटकल शब्द जहाँ तक मिल सके असल या नक़ल कराके मँगवाये। भर-सक तो पूरे ग्रन्थ छापे गये हैं और फुटकल शब्दों की हालत में सर्व साधारण के उपकारक पद चुन लिये हैं। प्रायः कोई पुस्तक बिना दो लिपियों का मुक़ाबला किये और ठीक रीति से शोधे नहीं छापी गई है और कठिन और अनूठे शब्दों के अर्थ और संकेत .फुट नोट में दे दिये हैं। जिन महात्मा की बानी है उनका जीवन-चरित्र भी साथ ही छापा गया है और जिन भक्तों और महापुरुषों के नाम किसी बानी में आये हैं उनके वृत्तान्त और कौतुक संक्षेप से .फुट नोट में लिख दिये गये हैं।

दो अन्तिम पुस्तकें इस पुस्तक-माला की अर्थात् संतबानी संग्रह भाग १ (साखी) और भाग २ (शब्द) छप चुकीं, जिनका नमूना देख कर महामहोपाध्याय पं० सुधाकर द्विवेदी बैकुंठ-वासी ने गद्गद होकर कहा था—"न भूतो न भविष्यति"।

एक अनूठी और अद्वितीय पुस्तक महात्माओं और विद्वानों के वचनों की "लोक परलोक हितकारी" नाम की गद्य में सन् १९१९ में छपी है जिसके विषय में श्रीमान् महाराजा काशी नरेश ने लिखा है—"यह उपकारी शिक्षाओं का अचरजी संग्रह है जो सोने के तोल सस्ता है"।

पाठक महाशयों की सेवा में प्रार्थना है कि इस पुस्तकमाला के जो दोष उनकी दृष्टि में आवें उन्हें हमको कृपा करके लिख भेजें जिससे वह दूसरे छापे में दूर कर दिये जावें।

हिन्दी में और भी अनूठी पुस्तकें छपी हैं जिनमें प्रेम कहानियों के द्वारा शिक्षा बतलाई गई है। उनके नाम और दाम सूची से, जो कि इस पुस्तक के अंत में छपी है, देखिये। अभी हाल में कबीर बीजक और अनुराग सागर भी छापी गई हैं जिसका दाम क्रमशः ॥।) और १) है।

मैनेजर, बेलवेडियर छापाख़ाना,

इलाहाबाद।

# सूचीपत्र शब्दों का

सूचीपत्र

| शब्द | पृष्ठ |
|---|---|

| शब्द | पृष्ठ |
| --- | --- |

---

# जगजीवन साहब की बानी

## दूसरा भाग

---

### बिरह और प्रेम का अंग।

॥ शब्द १ ॥

पैयाँ पकरि मैं लेउँ मनाय ॥टेक॥
कहौं कि तुम्ह हीं कहँ मैं जानौं, अब तुम्हरी सरनहिं आय १
जोरी प्रीत न तोरी कबहूँ, यह छबि सुरति बिसरि नहिं जाय २
निरखत रहौं निहारत निसु दिन, नैन दरस रस पियौं अघाय ३
जगजीवन के समरथ तुमहीं, तजि सतसंग अनत नहिं जाय ४

॥ शब्द २ ॥

उनहीं सोँ कहियो मोरी जाय ॥
ए सखि पैयाँ परि मैं बिनवौं, काहे हमैं डारिन बिसराय ॥१॥
मैं का करौं मोर बस नाहीं, दीन्ह्यो अहै मोहिं भटकाय ॥२॥
ए सखि साँइँ मोहिं मिलावहु, देखि दरस मोर नैन जुड़ाय ।३
जगजीवन मन मगन होउँ मैं, (रहौं) चरन कमल लपटाय ।४

॥ शब्द ३ ॥

पि तैं भैंट करावहु री, मैं जाउँ बलिहारी ॥टेक॥
पैयाँ पकरि मैं बिनवौं तुम्ह तैं, मैं तौ अहौं अनारी ।
पाँचु साँचु की गैल न आवहिं, इन्ह सब काम बिगारी ॥१॥

चलहिँ पचीस कुमारग निसु दिन, नाहीं जात सँभारी ।
सै तै मान गुमान न छोड़हिं, करि उपाय मैं हारी ॥२॥
तीनि त्यागि लै चलु चौथे कहँ, तब देखौं अनुहारी❀ ।
जगजीवन सखि हिलि मिलि करि कै, सीस चरन पर वारी

॥ शब्द ४ ॥

झसकि चढ़ि जाउँ अटरिया री ॥टेक॥
ए सखि पूछौं साँई केहिं अनुहरिया❀ री ॥१॥
सो मैं चहौं रहौं तेहि संगहिं, निरखि जाउँ बलिहरिया री ।
निरखत रहौं पलक नहि लाओं, सूतौं सत्त सेजरिया† री
रहौं तेहि सँग रँग रस माती, डारौं सकल बिसरिया री
जगजीवन सखि पावन परि कै, माँगि लेउँ तिन सनिया‡ री॥

॥ शब्द ५ ॥

अरी मोरे नैन भये वैरागी ॥टेक॥
भसम चढ़ाय मैं भइउँ जोगिनियाँ, सबै अभूषन त्यागि
तलफि तलफि मैं तन मन जार्यौं, उनहिं दरद नहिं लागी
निसु बासर मोहिं नींद हरी है, रहत एक टक लागी ।
प्रीत सों नैनन नीर बहतु है, पोपी पीवन जागी ॥२॥
सेज आय समुझाय बुझावहु, लेउँ दरस छवि माँगी ।
जगजीवन सखि तृप्त भये हैं, चरन कमल रस पागी ॥३॥

॥ शब्द ६ ॥

पैयाँ परि मैं हारिउँ हो, तुम्ह दरद न आनी ॥१॥
निगुनी अहौं बुद्धि की हीनी, गति तुम्हरी नहिं जानी ॥२
लागी रहत सुरति मन मोरे, भरमत फिरौं भुलानी ॥३॥

---

❀ रूप । † पलँग । ‡ स्नेह ।

जब छूटत तब मन मोर टूटत, समुझि समुझि पछितानी ४
काह कहौं कहि आवत नाहीं, जेहि हिय सुरति समानी ॥५॥
जो जानै सोई पै जानै, को करि सकै बखानी ॥६॥
जगजीवन कर जोरि कहत है, देहु दरस बरदानी ॥७॥

॥ शब्द ७ ॥

मैं निगुनी बन भूलि परिउँ, गुन एकौ नाहीं रे ॥टेक॥
मैं सोवत सखि चौंकि परिउँ, पिय पिय रट लागी रे।
भेंट बिना तन मन तलफै, मैं करम अभागी रे ॥१॥
जस जल बिना मीन तलफत है, अस मैं तलफि सुखानी रे।
अस मोरे सुधि सूरति आवत, लानत धूप पुहुप कुम्हिलानी रे ः
भा तन खाक नहीं किछु भावै, ह्वै जोगिनि बौरानी रे।
समुझावै को केहि का केहि बिधि, जेहिं लागी सोइ जानी रे ः
मुनि जन जती भूले यहि बन महँ, पियैं बिषय कै पानी रे।
सो अँदेस होत मन मोरे, कब धौं मिलिहौ आनी रे ॥४॥
मैं तैं पाँच पचीस डोरि लै, चढ़ि ठहरानी रे।
जगजीवन निर्गुन निर्मल तकि, भयुँ मस्तानी रे ॥५॥

॥ शब्द ८ ॥

मैं तन मन तुम्ह पर वारा ॥टेक॥
निसि दिन लागि चरन की छहियाँ, सूनो सेज निहारा ॥१॥
तुम्हरे दरस काँ भइ वैरागिन, माँगौं सरन करारा ॥२॥
डोरी पोढ़ि बिलग ना कबहूँ, निरखि कै रूप निहारा ॥३॥
जगजीवन के सतगुरु साईं, तुमहीं पार उतारा ॥४॥

॥ शब्द ९ ॥

जोगिनि भइउँ अँग भसम चढ़ाय ।
कब मोरा जियरा जुड़इहौ आय ॥१॥
अस मन ललकै मिलौं मैं धाय ।
घर आँगन मोहिं कछु न सुहाय ॥२॥
अस मैं व्याकुल भइउँ अधिकाय ।
जैसे नीर बिन मीन सुखाय ॥३॥
आपन केहि तें कहौं सुनाय ।
जो समुझौं तौ समुझि न आय ॥४॥
सँभरि सँभरि दुख आवै रोय ।
कस पापी कहँ दरसन होय ॥५॥
तन मन सुखित भयो मोर आय ।
जब इन नैनन दरसन पाय ॥६॥
जगजीवन चरनन लपटाय ।
रहै संग अब छूटि न जाय ॥७॥

॥ शब्द १० ॥

जोगिया भँगिया खवाइल, बौरानी फिरौं दिवानी ॥ टेक ॥
ऐसे जोगिया कि बलि बलि जैहौं, जिन्ह मोहि दरस दिखाइल ॥१
नहि कर तें नहि मुखहि पियावै, नैनन सुरति मिलाइल ॥२॥
काह कहौं कहि आवत नाहीं, जिन्ह के भाग तिन्ह पाइल ॥३॥
जगजिवनदास निरखि छबि देखै, जोगिया मुरति मन भाइल ॥४

॥ शब्द ११ ॥

साईं समरथ कृपा तुम्हारी ।
बालमीक अजामिल गनिका, तिह्यो छिनहिं माँ तारी ॥१॥

मैं बपुरा अजान का जानौं, का करि सकौं बिचारी ।
बहा जात अपंथ के मारग, तुम जानेहु हितकारी ॥२॥
नेग जनम जग धस्यो आनि कै, कबहुँ न सुद्धि सँभारी ।
अब डरपौं भौजाल देखि कै, लीजै अब की तारी ॥३॥
बरनत सेस सहस मुख ब्रह्मा, संकर लाये तारी ।
माया बिदित ब्यापि रहि सब महँ, निर्मल जोति तुम्हारी ॥४॥
अपरम्पार पार को पावै, कहि कथि सब कोउ हारी ।
जहँ जस बास पास करि जानी, तहँ तेइ सुरति सुधारी ॥५॥
अनगन पतित तारि एक छिन में, गनि नहिं जात पुकारी ।
जगजिवनदास निरखि छबि देख्यो, सीस चरन पर वारी ॥६॥

॥ शब्द १२ ॥

अब की बार तारु मोरे प्यारे। बिनती करि कै कहौं पुकारे १॥
नहिं बसि अहै केतो कहि हारे। तुम्हरे अब सब बनहि सँवारे २
तुम्हरे हाथ अहै अब सोई । और दूसरो नाहीं कोई ॥ ३ ॥
जो तुम चहत करत सो होई । जल थल महँ रहि जोति समोई ॥ ४ ॥
काहुक देत हो मंत्र सिखाई । सो भजि अंतर भक्ति दृढ़ाई ५
कहौं तो कछू कहा नहिं जाई । तुम जानत तुम देत जनाई ६
जगत भगत केते तुम तारा । मैं अजान केतनि बिचारा ७
चरन सीस मैं नाहीं टारौं । निर्मल मुरत निर्बान निहारौं ८
जगजीवन काँ अब बिस्वास। राखहु सतगुरु अपने पास ॥९॥

॥ शब्द १३ ॥

हरि छबिहिं दिखाय, मोर मन हरि लियो ॥ टेक ॥
सुमिरन भजन करत निसुबासर, सोई जुग जुग जियो ॥१॥
कह कहौं कहि आवत नाहीं, नयन दरस रस पियो ॥२॥
ज्ञान ध्यान जानत तुम्हीं कहँ, जन आपन कर लियो ॥३॥
जगजीवन स्वामी दास तुम्हारा, सीस चरन महँ दियो ॥४॥

॥ शब्द १४ ॥

साहब समरत्थ प्रीति तुम्ह तें लागी ॥ टेक ॥
नेग जनम करम फंद पस्यो नाहिं जागी ॥ १ ॥
अपथ पंथ तत्त जानि भूलेहुँ अभागी ॥ २ ॥
तेहि पस्यो सुधि बुद्धि हस्यो कौनि जुगत त्यागी ॥३॥
जगजिवनदास करै बिनती चरन सरन लागी ॥४॥

॥ शब्द १५ ॥

अब मोरि मान ले इतनी ॥टेक॥
तुम बिनु व्याकुल भरमत डोलत, अब तौ आनि बनी ॥१॥
मैं तौ दास तुम्हार कहावत, साहेब तुमहिं धनी ॥२॥
तुम तौ सत्तगुरू हौ हमरे, अल्लह अलख गनी ॥३॥
जगजीवन चरनन महँ लागो, नैन सौं सुरति तनी ॥४॥

॥ शब्द १६ ॥

ए सखि अब मैं काह करौं ।
भूलि परिउँ मैं आइ के नगरी, केहि बिधि धीर धरौं ॥१॥
अंत नहीं यहि नगर क पावौं, केतो बिचार करौं ।
चहत जो अहौं मिलौं मैं पिय कहँ, भ्रम की गैल परौं ॥२॥

हित मोरे पाँच होत अनहितई, बहुतक खैंच करौं ।
के तो प्रबोधि कै बोध करौं मैं, ई कहे धरौं धरौं ॥३॥
तीस पचीस सहेली मिलि सँग, ई गहै कैसे बरौं ।
पाँय पकरि कै बिनती करौं मैं, लै चलु गगन परौं ॥४॥
निरत निरखि छबि मोहिं कही अब, गहिं रहु नाहिं टरौं ।
जगजीवन सत दरस करौं सखि, काहे क भटक फिरौं ॥५॥

॥ शब्द १७ ॥

तुम तें बिनय सुनावौं, मोहि तें भेंट करावहु ।
सूरति उन कै कौनी बिधि कै, सो कहि मोहि बतावहु ॥१॥
दरसन बिन ब्याकुल मैं डोलौं, नैना मोर जुड़ावहु ।
सूरति तुम तजि देहु सयानप*, सहजहि प्रीति लगावहु ॥२॥
चलहु गगन चढ़ि संग हमारे, तब वह दरसन पावहु ।
बैठ अहैं पिउ वहि चौमहले, तहँ सत सेज बिछावहु ॥३॥
रहो सँग सूति एकही मिलिकै, कबहूँ नहिं दुख पावहु ।
जगजीवन सखि निरखि रूप छबि, सूरत सुरत मिलावहु ॥४॥

॥ शब्द १८ ॥

यहि नगरी महँ परिउँ भुलाई ।
का तकसीर भई धौं मोहिं तें, डारे मोर पिय सुधि बिसराई १
अब तो चेत भयो मोहिं सजनो, ढुँढ़त फिरहुँ मैं गइउँ हिराई।
भसम लाय मैं भइउँ जोगिनियाँ, अब उन बिनु मोहिं कछु न सुहाई ॥२॥
पाँच पचीस कि कानि मोहिं है, तातें रहौं मैं लाज लजाई ।
सुरति सयानप अहै यहै मत, सब इक बासि करि मिलि रहु जाई ३

* स्यानपन, चालाकी ।

निरति रूप निरखि के आवहु, हम तुम तहाँ रहहिं ठहराई।
जगजीवन सखि गगन मँदिर महँ, सत की सेज सूति सुख पाई ४

॥ शब्द १६ ॥

तुम सोँ नैना लागे मोरे ॥टेक॥
मैं बौरी दरसन बिनु डोलौं, अब पायौं बैठी रहौं नियरे।
तुम बिनु दुखित सुखित मैं नाहीं, कहत हौं पैयाँ पकरि के टेरे
दासी जनम जनम की तुम्हरी, भूलिउँ आवत जावत फेरे।
जगजीवन को सुरति तुम्हारी, लागी रहै सदा मन मेरे ॥२॥

॥ शब्द २० ॥

साईं तुम सौं लागो मन मोर ॥१॥
मैं तौ भ्रमत फिरौं निसुबासर, चितवौ तनिक कृपा करि कोर २
नहिं बिसरावहु नहिं तुम बिसरहु, अब चित राखहु चरनन ठौर।३
गुन औगुन मन आनहु नाहीं, मैं तौ आदि अंत को तोर ४
जगजीवन बिनती करि माँगै, देहु भक्ति बर जानि कै थोर ५

॥ शब्द २१ ॥

तुम तें का कहि बिनय सुनावौं।
बारंबारहि मोहि नचायो, केहि बिधि ध्यान लगावौं ॥१॥
महा अपरबल माया आहै, अंत खोज नहिं पावौं।
तेहि सुख परि सुधि भूलिगै मोरी, जानि बूझि बिसरावौं २
मोहिं पर पाँच पियादे गालिब, इन्ह तें कल नहिं पावौं।
जो मैं चहौं कि रहौं हजूरिहिं, इन्ह तें रहै न पावौं ॥॥३
झगरहिं नितहिं पचीस जोगिनी, केहि बिधि राह लगावौं।
आपनि आपनि करैं तरंगें, मैं कछु करै न पावौं ॥ ४ ॥
कुमति बह वहु सुमति देहु सुभ, सूरति छबिहिं मिलावौं।
जगजीवन पर करु किरपा अब, कबहुँ नहीं बिसरावौं ॥ ५ ॥

॥ शब्द २२ ॥

मेरो अब मन तुम तें लागा ॥टेक॥
सोवत रहिउँ अचेत सुद्धि नहिँ, गुरु सत मत तें जागा ।
आयो निर्गुन तें बिलगाइ कै, पहिरयो नीर क पागा* ॥१॥
जोरि जोरि रचि करि कै लीन्ह्यो, जहँ तहँ लाग्यो धागा ।
भयो करम बस स्वाद बाद महँ, भरमत फिरौं अभागा ॥२॥
होइ सचेत करि हेत कृपा भै, पहिरि निरभौ कै आँगा† ।
जगजीवन के साँई समरथ, रहौं रंग रस पागा‡ ॥३

॥ शब्द २३ ॥

अरी मैं तो नाम के रँग छकी ॥टेक॥
जब तें चाख्यो बिमल प्रेम रस, तब तें कछु न सोहाई ।
रैनि दिना धुनि लागि रही, कोउ केतौ कहै समुझाई ॥१॥
नाम पियाला घोँटि कै, कछु और न मोहिँ चही ।
जब डोरी लागी नाम की, तब केहि कै कानि रही ॥२॥
जो यहि रँग में मस्त रहत है, तेहि कै सुधि हरना ।
गगन मँदिल दृढ़ डोरि लगावहु, जाइ रहौ सरना ॥३॥
निर्भय ह्वै कै बैठि रहौ अब, माँगौ यह बर सोई ।
जगजीवन बिनती यह मोरी, फिरि आवन नहिँ होई ॥४॥

॥ शब्द २४ ॥

नइहरवाँ आय सुधि बिसरी, सुधि बिसरी मोरी सुरति हरी १
का नइहरवाँ फिरहु भुलानि, जैहौ ससुरवा परि है जानि २
काह कहौं कहि नाहीं जाइ, मोहिँ बपुरी की सुद्धि न आइ ३
जोगिनि भइ अँग भसम चढ़ाइ, बिनु पिया भैँट रहा नहिँ जाइ४

---

* पगड़ी । † अँगरखा । ‡ पगा हुआ ।

ए सखि सूरति देहु बताइ, देखि दरस मोर हियरा जुड़ाइ ॥५॥
जगजीवन कहै गुरु उपदेस, चरन कमल चित देहु नरेस ॥६॥

॥ शब्द २५ ॥

मोहिं करैं दुत्ता* लोग, महल मैं कौन चलै ॥टेक॥
छोड़ि दे बहियाँ मोरी, मोरि मति भइ भोरी† ॥१॥
कुमति मोरि यह माई, जिन्ह डार्यो सबै नसाई ॥२॥
यह पाँचो मोरे भाई, इ तौ रोकत आहैं आई ॥३॥
करैं पचीस बहु रंगा, इन्ह मिलि मति मोरी भंगा ॥४॥
यह सब लेउँ लेवाई, तब चढ़ौं अटरिया धाई ॥५॥
इन्ह सब काँ समुझावौं, तब अपने पियहिं रिझावौं ॥६॥
सेज सूति सुख पावौं, तब नैनन सुरति मिलावौं ॥७॥
ए सखि ऐसि बिचारी, तौ होउँ मैं पिय की प्यारी ॥८॥
जगजीवन सत माती, तब जुग जुग सखि अहिवाती‡ ॥९॥

॥ शब्द २६ ॥

मैं तोहिं चीन्हा, अब तौ सीस चरन तर दीन्हा ॥टेक॥
तनिक झलक छबि दरस देखाय ।
तब तें तन मन कछु न सोहाय ॥१॥
काह कहौं कहि नाहीं जाय ।
अब मोहि काँ सुधि समुझि न आय ॥२॥
होइ जोगिन अंग भस्म चढ़ाय ।
भँवर गुफा तुम रहेउ छिपाय ॥३॥
जगजीवन छबि बरनि न जाय ।
नैनन मूरति रही समाय ॥४॥

---

* दुत्कार। † भोली हुई, बावली। ‡ सोहागिन।

॥ शब्द २७ ॥

रहिउँ मैं निरमल दृष्टि निहारी ॥ टेक ॥
ए सखि मोहिं तें कहिय न आवै, कस कस करहुँ पुकारी ॥१॥
रूप अनूप कहाँ लगि बरनौं, डारौं सब कछु वारी ॥२॥
रबि ससि गन तेहिं छबि सम नाहीं, जिन केहु गहा बिचारी ३
जगजीवन गहि सतगुरु चरना, दीजै सबै बिसारी ॥ ४ ॥

॥ शब्द २८ ॥

प्रभु जी मैं तौ आहुँ तुम्हारा ।
पूजा अरचा नाहीं जानौं, जानौं नाम पियारा ॥१॥
सो हित सदा होत नहिं अनहित, बास किहे संसारा ।
कहत हौं दीन लीन रहौं तुम तें, तुम ब्रत राखनहारा ॥२॥
अंतरध्यान गगन मगन ह्वै, निरखौं रूप तिहारा ।
पुहुप गूँधि कै माला लैकै, सो पहिरावौं हारा ॥ ३ ॥
पान चून औ खैर सुपारी, गरी जायफल दोहरा ।
कपूर इलायची मेरै* खवावौं, पूजा इहै हमारा ॥ ४ ॥
कटहर कोवा मेवा ल्यावौं, सोऊ पवावौं प्यारा ।
कनक नीर कर तें मुख धोवौं, तकि के चरन प्रछारा† ॥५॥
सो चरनामृत नित्त पियो है, सुभ भा जनम हमारा ।
जगजीवन कहँ दिहे रहहु यह, दाता होहु हमारा ॥६॥

॥ शब्द २९ ॥

सखी री करौं मैं कौन उपाई ।
मैं तौ व्याकुल निस दिन डोलौं, उनहिं दरद नहिं आई ॥१॥
काह जानि कै सुधि बिसराई, कछु गति जानि न जाई ।
मैं तौ दासी कलपौं पिय बिनु, घर आँगन न सुहाई ॥२॥

---

* मिला कर । † धोया ।

तलफि तलफि जल बिना मीन ज्यों, अस दुख मोहिं अधिकाई।
निर्गुन नाह* बाँह गहि सेजिया, सूतहि हियरा जुड़ाई ॥३॥
बिन सँग सूते सुख नहिं कबहूँ, जैसे फूल कुम्हिलाई।
ह्वै जोगिन मैं भस्म लगायौं, रहिउँ नयन टक लाई ॥४॥
पैयाँ परौं मैं निरति निरखि कै, मोहिं का देहु मिलाई।
सुरति सुमति करि मिलहिं एक ह्वै, गगन मँदिल चलि जाई ॥५॥
रहि यहि महल टहल महँ लागी, सत की सेज बिछाई।
हम तुम उनके सूत रहहिं सँग, मिटै सबै दुचिताई ॥६॥
जगजीवन सिव ब्रह्मा बिस्नू, मन नहिं रहि ठहराई।
रबि ससि करि कुरबान ताहि छबि, पीवो दरस अघाई ॥७॥

॥ शब्द ३० ॥

पिय को देहु मिलाय, सखी मैं पइयाँ लागौं ॥टेक॥
रैनि दिना मोहिं नींद न आवै, घर आँगन न सोहाय।
मैं बौरी बपुरी ब्याकुल हौं, उन्हैं दरद ना आय ॥१॥
कौन गुनाह भयो धौं मोहिं तें, डारिन्ह सुधि बिसराय।
बहुत दिनन तें बिछुरे मोहिं तें, कहँ धौं रहे छिपाय ॥२॥
तलफत मीन बिना जल के ज्यों, अस मोर जिया अकुलाय।
भसम लगाय मैं भइउँ जोगिनियाँ, अंत न उनका पाय ॥३॥
सूरति कानि छाँड़ि दइ इत उत, देहौं भैंट कराय।
निरति निरखि जौन छवि आइहु, रूप सो देहुँ बताय ॥४॥
कौनी भाँति अहै केहि मंदिल, भैंट करन तहँ जाय।
सत सेजासन बैठि चौमहले, रवि ससि छवि छपि जाय ॥५॥
ब्रह्मा बिस्नु सिव का मन तहवाँ, दिस्टि सो कहा न जाय।
जगजीवन सखि हिलिमिलि हम तुम, रहि चरनन लिपटाय ॥६॥

---

* पति।

# उपदेश का अंग।

॥ शब्द १ ॥

मन रहु आसन मारि मढ़ी तैं न डोलहु रे।
राते माते रहहु प्रगट नहिं खोलहु रे ॥१॥
निरखत परखत रहहु बहुत नहिं बोलहु रे।
रजनी किवाड़ दीन्ह सत कुंजी तैं खोलहु रे ॥ २ ॥
गुरु के चरन दै सीस आस सब त्यागहु रे।
जहँ जहँ तुम रहहु इहै बर माँगहु रे ॥३॥
चौक बनी चौगान चकमकी बिराजै रे।
रबि ससि छबि तेहिं वारि हंस तेहिं गाजै रे ॥४॥
ब्रह्मा बिसनु सिव मन निर्गुन अस्थूला रे।
तेहि हिलि मिलि परसंग फिरहु नहिं भूला रे ॥५॥
चमकत निर्मल रूप झलक बिनु हीरा रे।
जगजीवन रहु मगन बैठु तेहिं तीरा रे ॥६॥

॥ शब्द २ ॥

साधो भक्ति नहीं औसान*।
कहन सुनन को बहुत हैं, हिये ज्ञान नाहिं समान ॥१॥
सरत नहिं कछु करत औरै, पढ़त वेद पुरान।
और को समुझाइ सिखवत, आपु फिरत भुलान ॥२॥
करत पूजा तिलक दैकै, प्रात करि अस्नान।
भ्रमत है मन हाथ नाहीं, नाहि थिर ठहरान ॥३॥

---

* आसान; सहज।

तीर्थ व्रत तप करहिँ बहु बिधि, होम जग जप दान ।
याहि माँ पचि रहत निसि दिन, धर्‍यो नाहीँ ध्यान ॥४॥
सीस केस बढ़ाइ रज* अंग, लाइ भे निर्बान ।
अंत तत्वं नाहिं अजपा, भ्रमत फिरे निदान ॥५॥
पहिरि माला फूल इत उत, बाद जहँ तहँ ठानि ।
नर्क प्रापत भये तेहू, बृथा जनम सिरान ॥६॥
सहज जग रहि सुरति अंतर, भजन सो परमान ।
जगजीवन ते अमर प्रानी, तेहिँ समान न आन ॥७॥

॥ शब्द ३ ॥

साधो मंत्र सत मत ज्ञान ।
देखि जड़ बहुतेर अंधे, झूठ करहिँ बखान ॥ १ ॥
जपहिँ नावँ तपहिँ मैँ तैँ, किहे गर्व गुमान ।
नाहिँ थिर मन चलत जहँ तहँ, अचल नहिँ ठहरान ॥२॥
करहिँ बातैँ बहुत विधि तैँ, आपु अहहिँ हेवान ।
गयो अजपा भूलि भूले, गयो बिसरि तेवान† ॥३॥
डोरि दृढ़ करि लाउ पोढ़ी, सत्त नामहिँ जान ।
जगजीवन गुरु सत्त समरथ, निरखि लखि निरबान ॥४॥

॥ शब्द ४ ॥

मन गुरु चरन धरि रहु ध्यान ॥टेक॥
अमर अहै अडोल अचलं मानि ले परमान ॥१॥
लाइ संकर रहे तारी कहत बेद पुरान ॥२॥
तत्त सारं इहै आहै अवर नाहीं जान ॥३॥
निराकारं निराधारं निर्गुनं निर्बान॥४॥
जगजीवन तूँ निरखि सूरति चरन रहु लपटान ॥५॥

---

*भभूत । †सोच विचार ।

॥ शब्द ५ ॥

ए मन निरखि ले ठहराइ ।
ऐसि सूरति अहै मूरति, अजब दिप्ति सोहाइ ॥१॥
रहा बैठा त्यागि ऐंठा, अनत नहिं बहि जाइ ।
गहौ सतमत जानि ऐसे, नाहिं संकर पाइ ॥२॥
संत मुनि जन रहत जागे, बेद भाषत गाइ ।
नाहिं उत्तम और आहै, लखा जिन का आइ ॥३॥
देखि के जे मस्त भे हैं, मिटी सब दुचिताइ ।
जगजिवन सतगुरु पास बैठे, कबहुँ नहिं बिलगाइ ॥४॥

॥ शब्द ६ ॥

साधो देखो मनहिं बिचारी ।
अपने भजन तंत सों रहिये, राखो डोरि सँभारी ॥१॥
भेद न कहिये गुप्तहिं रहिये, कठिन अहै संसारी ।
सुमति सुमारग खोजहिं नाहीं, तैसे नर तस नारी ॥२॥
साध की निंदा करत न डरपत, कुटिलाई अधिकारी ।
ताहि पाप तें नर्क परहिंगे, भुगतहिंगे जुग चारी ॥३॥
करहिं बिवाद सब्द नहिं मानहिं, मन फूलहिं अधिकारी ।
बड़े भाग यहि जग माँ आये, डारिन्ह जन्म बिगारी ॥४॥
सत मत पाय केहू जन बिरले, सूरति राखै न्यारी ।
जगजीवन के सतगुरु समरथ, संकट मेटि उबारी ॥५॥

॥ शब्द ७ ॥

साधो जग परखा मन जानी ।
संत काँ मिलत कपट मन राखत, बोलत अमृत बानी ॥१॥

कहत हैं और करत हैं औरै, कीन्हे बहुत सयानी।
सुपने सुमति न कबहूँ आवै, नरक परैं ते प्रानी ॥२॥
बहु बकवाद झूठ कहि भाखैं, सरस* आपु कहँ जानी।
अह निरास कीच के कोरा, मरिगे कीच सुखानी ॥३॥
आवत देखि दृष्टि मोहि ऐसे, ज्ञान कहत हौं छानी।
बिरले संत तंत† तेँ लागे, प्रीति नाम तें ठानी ॥४॥
रहहिं निरंतर अंतर सुमिरहिं, धन्य अहैं ते प्रानी।
जगजीवन न्यारे सबहीं तेँ, सुरति चरन ठहरानी ॥५॥

॥ शब्द ८ ॥

साधो अस्तुति जन जग लूटा।
गुप्त रहै छिपि मगन मनहिं माँ, भजन कै होइ न टूटा ॥१॥
खैंचत सत सीढ़ी के नीचे, गुरु सनमुख तेँ छूठा।
आय परे मन मोह सहर माँ, बाँधे भ्रम के खूँटा ॥२॥
पूजत जक्त भक्त कहि तिन काँ, ध्यान चरन तेँ छूटा।
सुमति भे छीन नहीं लय लागत, कुमति ज्ञान धरि कूटा ॥३॥
होइ निर्बान निंदा तेँ साधू, अघ क्रम जरि भे भूटा।
निंदक कर निरबाह नहीं है, जम दूतन धरि कूटा ॥४॥
करिकै जुक्ति जक्त करु वासा, ज्यौँ मक तागा ऊटा।
जगजीवन रस चाखि नैन तेँ, ज्यौँ मधु माखी घूटा ॥५॥

॥ शब्द ९ ॥

साधो मैं प्रभु तेँ लव लाई।
जानौँ नाहिं अजान अहौँ मैं, उनहीं राह बताई ॥१॥

---

* बड़ा, उत्तम। † तत्व वस्तु।

कोइ निंदा कोइ अस्तुति करई, कोई करै दिनताई ।
जो जैसी करि मन महँ जानै, तेहि तस प्रगटहि जाई ॥२।
कोइ कहे क्रूर* पूर नहिं भाखै, रामहिं नाहिं डेराई ।
मैं तो अहौं राम भरोसे, ताही की प्रभुताई ॥३॥
होइहि सोई टरै काँ नाहीं, ब्रह्मा बचन सुनाई ।
साधन की जे निंदा करिहैं, परहिं नरक ते जाई ॥४॥
नैन देखि के स्रवर सुनि कै, कहत अहौं गोहराई ।
जगजिवनदास सब्द कहि साँचा, छोड़ देहु गफिलाई ॥५।

॥ शब्द १० ॥

साधो केहि बिधि ध्यान लगावै ।
जो मन चहै कि रहौं छिपाना, छिपा रहे नहिं पावै ॥१॥
प्रगट भये दुनिया सब धावत, साँचा भाव न आवै ।
करि चतुराई बहु बिधि मन तें, उलटे कहि समुझावै ॥
भेष जगत दृष्ठी तें देखत, औरै रचि के गावै ।
चाहत नहीं लहत नहि नामहि, तृस्ना बहुत बहावै ॥३।
गहि मत मंत्र रहै अंतर महँ, नाहीं कहि गोहरावै ।
जग जीवन सतगुरु की मूरति, चरनन सीस नवावै ॥४।

॥ शब्द ११ ॥

अब मन मंत्र साँचा सोइ ।
भाग बड़ हैं ताहि के, जेहि नाम अंतर होइ ॥१॥
प्रगट कहि के नाहिं भाषै, गुप्त राखै सोइ ।
जागि पागि के सिद्ध होवै, प्रगट तबहीं होइ ॥२॥
जिकर लाये सिखर चढ़िगे, गह्यो चरनन टोइ ।
नेग जनम के करम अघ जे, गये पल में धोइ ॥३॥

---

*कटु बचन ।

देखि सूरति निरखि गुरु कै, रह्यो ताहि समोइ ।
जगजीवन परकास निर्मल, नाहिं न्यारा होइ ॥४॥

॥ शब्द १२ ॥

अपने देखि रहु मन जानि ।
तत्त सार दुइ अहैं अच्छर, मन प्रतीति करि आनि ॥१॥
परगट कहौं कहा नहिं मानै, है बिबाद की खानि ।
सूकर स्वान बिबादक* निन्दक, जानहिं लाभ न हानि ॥२॥
मारग असुभ चलहिं निसि बासर, कबहुँ न आनहिं कानि ।
सो देखा परगट अस नैनन, लियो अहै पहिचानि ॥३॥
अहौं भरोसे सदा नाम के, लियो तत्तहिं छानि ।
जगजीवन सतगुरु नैन निकटहिं, चरन गहि लिपटान ॥४॥

॥ शब्द १३ ॥

साधो सुमिरो नाम रसाला ।
बकबादी बीबादी निन्दक, तेहिं का मुँह करु काला ॥१॥
अन्तर डोरि पोढ़ि कै लावहु, सुमति का पहिरहु माला ।
सतगुरु चरन सीस लै लावहु, वै करि हैं प्रतिपाला ॥२॥
दुनिया अजब धंध माँ लागी, देखहु प्रगट खियाला ।
नहिं बिस्वास मनहिं माँ आवत, पड़े भरम के जाला ॥३॥
मन तें न्यारे सदा बसत रहो, यहि संतन कै हाला ।
जगजीवन वह जोति है निर्मल, निरखि से होहु निहाला ॥४॥

॥ शब्द १४ ॥

ए मन मंत्र लीजै छानि ।
लेहु अजपा लाइ अंतर, और बिरथा जानि ॥१॥

---

*बिवादी, फटहुज्जती ।

धाव नाहीं कहूँ इत उत, अहै बिष कै खानि ।
ताहि नर बस होहुगे जब, होइ सत मत हानि ॥२॥
आइ केते जगत मेँ यहि, मरिगे खाक उड़ानि ।
बृथा सर्बस जानि कै, भजि लेहु करि पहिचानि ॥३॥
मारि मैं तैं दीन ह्वै कै, सुमति मन महँ आनि ।
जगजीवन बिस्वास गहिये, निरखि छबि निर्बानि ॥४॥

॥ शब्द १५ ॥

साधो चढ़त चढ़त चढ़ि जाई ।
रसना रठना लहै लगाये, देइ सकल बिसराई ॥१॥
अजपा जपत रहै निसि बासर, कबहुँ छूटि नहिं जाई ।
छकित भये रस पाय मस्त ह्वै, मन को तलफ बुझाई ॥२॥
निरखत रहै अलख तहँ मूरति, निर्मल दिप्ति तहँ छाई ।
दुइ कर चरन सीस रहै लाये, रूप तकै निरताई* ॥३॥
जो जानै जस मानै तैसै, कहै कवन गोहराई ।
जगजीवन सतगुरु किरपा तब, आवतही लौ लाई ॥४॥

॥ शब्द १६ ॥

मनुआँ बैठि रहहु चौगाना ।
इत उत देखि तमासा आवहु, कहूँ बिलँब नहिँ आना ॥१॥
लैकै पाँच करहु इक साँचे, लै पचीस सँग ताना ।
मैं मरि तैं काँ तोरि डारि कै, तब ह्वैहौ निर्बाना ॥२॥
धुनि धूनी तहँ लाइ कै बैठहु, गुरु तेँ करि पहिचाना ।
निरखहु नैनन देखि मस्त ह्वै, का करि सकहु बखाना ॥३॥

*पास से ।

दियो दुआ* गुरु जियहु जुगन जुग, निर्भय भये निदाना ।
जगजीवन सुख भयो अनँद मन, अचल भयो बलवाना ॥४॥

॥ शब्द १७ ॥

मनुआँ साँची प्रीति लगाव ।
एकहिं तैंनी सदा राखु चित, दुबिधा नहिं लै आव ॥१॥
दुनियाँ कै चार बिचार अहैं जो, सकल सबै बिसराव ।
राखहु चित्त मित्र वहि जानहु, ताही तें लै लाव ॥२॥
पाँच पचीस एक ठिन† आहैं, जुगुति तें एइ समुझाव ।
डोरि पोढ़ि जो लागहि चरनन, बनि है तबै बनाव ॥३॥
सतगुरु मूरति निरखि रहौ तहँ, सूरति सुरति मिलाव ।
जगजिवनदास अमल‡ तें माते, सकल सो भरम बहाव ॥४॥

॥ शब्द १८ ॥

मन में जेहिं लागी जस भाई ।
सो जानै तैसै अपने मन, का सौं कहै गोहराई ॥१॥
साँची प्रीति की रिति है ऐसी, राखत गुप्त छिपाई ।
झूठे कहुँ सिखि लेत अहहिं पढ़ि, जहँ तहँ झगरा लाई ॥२॥
लागे रहत सदा रस पागे, तजे अहहिं दुचिताई ।
ते मस्ताने तिन्हहीं जाने, तिन्हहिं को देइ जनाई ॥३॥
राखत सीस चरन तें लागा, देखत सीस उठाई ।
जगजीवन सतगुरु की मूरति, सूरति रहे मिलाई ॥४॥

॥ शब्द १९ ॥

ज्ञान गुन कवन कहे रे भाई ।
माया प्रबल अंत कछु नाहीं, सब कोइ पस्यो भुलाई ॥१॥

---

*असीस । †जगह । ‡नशा ।

संकर तारी लाइ रहे हैं, जोतिहिं जोति मिलाई।
ब्रह्मा बिस्नु मन थकित भजन तें, तिनहूँ अंत न पाई ॥ २ ॥
उहाँ रघुपति उहाँ कृस्न कहायो, नाच्यो नाच नचाई।
यह सब करिकै देखि तमासा, फिरि वोहि जोति समाई ॥३॥
रह्यो अलिप्त लिप्त नहिं काहू, जिन जैसे मन लाई।
जगजीवन बिस्वास जिन सुमिरा, तहँ तस दरस दिखाई ॥४॥

॥ शब्द २० ॥

बौरे करै गुमान न कोई।
जिन काहू गुमान मन कीन्हा, गयो छिनहिं माँ खोई ॥१॥
जनम पाइ जग यह नर देँही, मन जानै नहिं कोई।
दियो बिसराइ नाम को मन तें, भला न जानहु कोई ॥२॥
निर्मल नाम जानि मन सुमिरै, अघ क्रम गै सब धोई।
बड़े भाग करम तेहिं जागे, सतसँग चित्त समोई ॥३॥
भा निर्बाह बाँह गहि राख्यो, किरपा जा पर होई।
जगजीवन न्यारे सबही तें, जानै अंत न कोई ॥४॥

॥ शब्द २१ ॥

जग बिनु नाम बिर्था जानु।
करहु मन परतीति अपने, खैँचि सूरति आनु ॥ १ ॥
धाम दौलत हरखु ना तकि, खाक करिकै मानु।
यह तो है दिन चार का सुख, अोस तकि झरि भानु ॥२॥
देखि दृष्टि पसारि सब, चलि गये करिके पयानु।
नाम रस जिन पिया तिन्ह कहँ, अमर संत बखानु ॥३॥
साथ गुरु के रहे जुग जुग, रूप तकि निर्बानु।
जगजीवन बिस्वास करिकै, सत्तनामहिं मानु ॥४॥

॥ शब्द २२ ॥

रे मन रहौ प्रीति लगाय ।
झूठि आसा और है सब, देहु सो बिसराय ॥१॥
बुंद तें इक तीन चौथो, लियो छिनहिं बनाय ।
नाम सो वह अहै ऐसो, हरहु ते रट लाय ॥२॥
दियो जोति पसारि कै सब, रहे इक ठहराय ।
साधि साधन तका जिन केहुँ, छकित भे रस पाय ॥३॥
अहै परगट छिपा नाहीं, देत हौं बतलाय ।
जगजीवन नित पास गुरु के, चरन रहि सिर नाय ॥४॥

॥ शब्द २३ ॥

बौरे नाम भजु मन जानि ।
सत्तनामहिं गहो अंतर, लियो आहै छानि ॥१॥
त्यागि दुबिधा करहु धीरज, मानु लाभ न हानि ।
सब्द सत्त पुकारि भाखत, लीजिये यहि मानि ॥२॥
लियो केते तारि छिन महँ, कहै कौन बखानि ।
दास कहँ जहँ पर्‌यो संकट, लियो तहँ सुधि आनि ॥३॥
कौन को करि सकै बरनन, मैं अहौं काह कितानि ।
जगजीवन काँ करहु दाया, निरखि छबि निर्बानि ॥ ४ ॥

॥ शब्द २४ ॥

प्रभुजी अब मैं कहौं सुनाई ।
देखि चरित्र सबै दुनियाँ के, अब कछु कहा न जाई ॥ १ ॥
करहिं बन्दगी सीस नाइकै, पाछे करि कुटिलाई ।
ताहि पाप संताप परहिंगे, परैं नरक माँ जाई ॥२॥

दौलत धाम देखि कै माते, चेत हेत नहिं आई ।
धाइ धाइ औरहिं समुझावैं, बिनु जल बूड़े जाई ॥ ३ ॥
करहिं पाप औ ज्ञान कथहिं बहु, आपन बिभौ बढ़ाई ।
ते नर अंत नर्क माँ गलिगे, कहत सब्द गोहराई ॥४॥
डिंभ बढ़ाइ कपट करि पूजा, झूठै ध्यान लगाई ।
दिना चारि जग सबहिं दिखाइनि, डारिनि जनम नसाई ॥५॥
साधु ते सीतल रहै दीन ह्वै, जनमि जगत सुख पाई ।
जगजीवन जो मन महँ जानै, तिन पर रहौ सहाई ॥६॥

॥ शब्द २५ ॥

साधो रसनि रटनि मन सोई ।
लागत लागत लागि गई जब, अंत न पावै कोई ॥१॥
कहत रकार मकारहिं माते, मिलि रहे ताहि समोई ।
मधुर मधुर ऊँचे को धायो, तहाँ अवर रस होई ॥२॥
दुइ कै एक रूप करि बैठे, जोति झलमली होई ।
तेहि काँ नाम भयो सतगुरु का, लीह्यो नीर निचोई ॥३॥
पाइ मंत्र गुरु सुखी भये तब, अमर भये हहिं वोई ।
जगजीवन दुइ कर तें चरन गहि, सीस नाइ रहे सोई ॥४॥

॥ शब्द २६ ॥

मन तुम का औरहिं समुझावहु ।
आपुहिं समुझहु आपुहि बुझहु, आपुहिं घट माँ गावहु ॥१॥
ऊँचे जाहु निचे काँ आवहु, फिरि ऊँचे कहँ धावहु ।
जवनि रसनि* लागी तुमहीं काँ, तौनिउ रसनि मिटावहु ॥२॥

---

* स्वाद, चाट ।

देखहु मस्त रहहु ह्वै मनुश्राँ, चरनन सीस नवावहु ।
ऐसी जुगुति रहहु ह्वै लागे, कबहुं न यहि जग आवहु ॥३॥
जुग जुग कबहुँ अंग नहिं छूटै, और सबै बिसरावहु ।
जगजीवन परकास बिदित छबि, सदानन्द सुख पावहु ॥४॥

॥ शब्द २७ ॥

साधो जस जाना तस जाना ।
जैसा जा को जानि पराहै, सो तैसै मन माना ॥१॥
अपनी अपनी बानी बोलहिं, हमहिं सिखावहिं ज्ञाना ।
अपने मन कोइ समुझत नाहीं, आहहिं बड़े हेवाना ॥२॥
लागत नहिं जागे की बातैं, सोवत सबै निदाना ।
सोवत चौंकि के जागि परे जे, आगम दीन्ह तेवाना* ॥३॥
चले पंथ चढ़ि गये गगन कहँ, थिर ह्वै रहे ठहराना ।
जगजीवन सतगुरु की मूरति, तकि सूरति निर्बाना ॥४॥

॥ शब्द २८ ॥

साधो जिन्ह जाना तिन्ह जाना ।
जेहिकाँ जैसे जानि परा है, तेहिं तैसे मन माना ॥१॥
माला मुद्रा तिलक बनाइ कै, पूजहिं काँस पषाना ।
जस बिस्वास बँध्यो है जिन्ह के, तेहि काँ तस परमाना ॥२॥
जो जस जानत तेहिं तस जानत, अस है कृपानिधाना ।
अपरम्पार अपार अहै गति, को करि सकै बखाना ॥३॥
व्यापि रह्यो जल थल महँ आपुहिं, कहँहुँ नहीं बिलगाना ।
जगजीवन न्यारा है सब तैं, संतन महँ ठहराना ॥४॥

---

* सोच, फ़िक्र ।

॥ शब्द २९ ॥

साधो परगट कहौं पुकारी ।
दुइ अच्छर ततसार अहै एइ, नाम की बलिहारी ॥१॥
लीन्ह्यो छानि जानि कै मन तें, दृढ़ कै डोरि सँभारी ।
लागि रहै निसु बासर मन तें, कबहूँ नाहिं बिसारी ॥२॥
बिन बिस्वास आस नहिं पूजै, भूला सब संसारी ।
दैंही पाइ कनक काया की, डारिनि जनम बिगारी ॥३॥
देत अहौं सुनाइ सिखाये, सत मत गहौ बिचारी ।
जगजीवन सतगुरु की मूरति, निरखत अहै निहारी ॥४॥

॥ शब्द ३० ॥

साधो कहत अहौं गोहराइ ।
सत्त नाम रस अम्रित पीवहु, चरन तें लौ लाइ ॥१॥
पिया नहिं सो जिया नाहीं, रहे मन पछिताइ ।
काल मारिके खाइ लीन्हो, केहु लीन्ह नाहिं बचाइ ॥२॥
ज्ञान बेद गिरंथ भाषत, दीन्ह प्रगट बताइ ।
भजै नहिं सो जानि मन महँ, भाड़ पड़े सो जाइ ॥३॥
भजत तजत अँदेस मन रति, नाम की सरनाइ ।
जगजिवनदास मिटाइ संकट, जनहिं लेहिं बचाइ ॥४॥

॥ शब्द ३१ ॥

साधो नाम तें रहु लौ लाय । प्रगट न काहू कहहु सुनाय ॥१॥
झूठै परगट कहत पुकारि । ता तें सुमिरन जात बिगारी ॥२॥
भजन बेलि जात कुम्हिलाय । कौनि जुक्ति कै भक्ति दृढ़ाय ॥३॥
सिखि पढ़ि जोरि कहै बहु ज्ञान । सो तौ नाहिं अहै परमान ॥४॥
प्रीति रीति रसना रहै गाय । सो तौ राम काँ बहुत हिताय ॥५॥

सो तौ मोर कहावत दास । सदा बसत हैाँ तिन के पास ॥६।
मैं मारि मन तें रहे हैं हारि । दिप्र जोति तिन कै उजियारि॥७।
जगजिवनदास भक्त भे सोइ । तिनका आवागवन न होइ ॥८

॥ शब्द २२ ॥

साधो रटत रटत रट लावा ।
दुइ अच्छर बिचारि कै लीन्ह्यो, सो अन्तर लै लावा ॥१॥
परगट कहे साँचु नहिं मानत, सुनि काहू नहिं भावा ।
काहू के परतीत नहीं है, केतौ कहि समुझावा ॥२॥
करता नाम अहै अस खाविंद, जिन्ह सब रचि के बनावा ।
हम का जानि परत है सोई, तेहि काँ सीस नवावा । ॥३॥
लियो चढ़ाइ गयो मंडफ कौं, गुरु तें भैंट करावा ।
मिटिगा जापु आपु माँ मिलिगा, एकहि एक कहावा ॥४॥
रहि निरथाइ दृष्टि तें देखा, झलकि दरस तब पावा ।
जगजीवन ते निर्भय हैगे, अभय निसान बजावा ॥५॥।

॥ शब्द २२ ॥

साधो नाम भजे सुख होई ।
तजि हंकार गुमान दीन ह्वै, सीतल अंतर सोई ॥१॥
लै लगाय रहि सत्तनाम तें, संगति नाहिं बिछोई ।
किये गुमान भक्त जन तें जिन्ह, तेऊ गये बिगोई ॥२॥
समय पाइ जिन्ह जाना नाहीं, मोह के भर्म फँसोई ।
अंत काल कपित जम कीन्हो, चले सनहिं मन रोई ॥३॥
रहो जगत माँ लीन नाम तें, मैं तैं दुविधा धोई ।
जगजीवन भौजाल छूटिगा, चरनन रहे समोई ॥४॥

॥ शब्द ३४ ॥

जो कोई घरहिं बैठा रहै ।
पाँच संगत करि पचीसौ, सब्द अनहद लहै ॥१॥
दीन सीतल लीन मारग, सहज बाहनि बहै ।
कुमति कर्म कठोर काठहिं, नाम पावक दहै ॥२॥
मारि मैं तैं लाय डोरी, पवन थाँभे रहै ।
चित्त कर तहँ सुमति साधू, सुरति माला गहै ॥३॥
राति दिन छिन नाहिं छूटै, भक्त सोई अहै ।
जगजीवन कोइ संत बिरला, सब्द की गति कहै ॥४॥

॥ शब्द ३५ ॥

सत्त नाम बिना कहौ, कैसे निस्तरिहौ ।
कठिन अहै माया जार, जा को नहिं वार पार,
कहौ काह करिहौ ॥ १ ॥
हो सचेत चौंकि जागु, तगहि त्यागि भजन लागु,
अंत भरम परिहौ ।
डारहि जमदूत फाँसि, आइहि नहिं रोइ हाँसि,
कौन धीर धरिहौ ॥ २ ॥
लागहि नहिं कोइ गोहारि, लेइहि नहिं कोइ उबारि,
मनहिं रोइ रहिहौ ।
भगनी सुत नारि भाइ, मातु पितु सखा सहाइ,
तिनहिं कहा कहिहौ ॥ ३ ॥
आइहि नहिं डोलि बोलि, नैनन टक लाय रहिहौ ।
काहुक नहिं कोउ जगत, मनहिं अपने जानु गत,
जीवत मरि जाहु दीन अंतर माँ रहिहौ ॥४॥

सिद्ध साध जोगि जती, जाइहि मरि सब कोई,
रसना सतनाम गहि रहिहौ ।
जगजिवनदास रहौ बैठे, सतगुरु के पास चरन,
सीस धरि रहिहौ ॥ ५ ॥

॥ शब्द ३६ ॥

मनहिं मारि गहहु नाम, देत हौं सिखाई ।
सोवत जागत ठाढ़ बैठि, बिसरि नाहिं जाई ॥१॥
तजि दे गुमान गर्ब, मैं तैं गफिलाई ।
निंदा कुटिलइ बिबाद, दूरि दे बहाई ॥२॥
पाँच पचीस खैंचि ऐंचि, रखिये अरुझाई ।
सीतल सुसील छिमा, करि रहु दिनताई ॥३॥
ऐसी जुक्ति भक्ति की, सो सब्द कहि बताई ।
जगजीवन गुरु चरनन, रहहु चित्त लाई ॥४॥

॥ शब्द ३७ ॥

अरे मन रहहु चरन तैं लाग । इत उत सकल देहु तुम त्याग १
दुइ कर जोरि कै लीजै माँग । सोवत उठहु मोह तैं जाग ॥२॥
नयन निरखि छबि रहु रस पाग । कर्म भर्म सब जैहहि भाग ॥३
जगजीवन अस रहु अनुराग । जानु आपने तबहीं भाग ॥४॥

॥ शब्द ३८ ॥

सुमिरहु मन सत्तनाम सकल धंध त्यागी ॥टेक॥
काहे अचेत सूत बौरे, चौंकि जगु अभागी ।
ज्ञान ऐना देखि करि कै, उलटि रहहु लागी ॥१॥
छिमा बुंद कै पहिरि जामा, भयो आय खाकी ।
जायगा घर पवन अपने, रहे ना कछु बाकी ॥२॥

आयो एहि जग कौल करि कै, लियो सत सुधि माँगी ।
भूलि गा वह सब्द पछिला, माति* मद रस पागी ॥३॥
दौरु मुरख चूकु ना तैं, दृढ़ मत अनुरागी ।
जगजीवन बिस्वास के बसि, होय तब बैरागी ॥४॥

॥ शब्द ३६ ॥

साधो सब्द कहै सो करिये ।
अंतर नाम रहै रटि लागी, गुप्त जक्त माँ रहिये ॥१॥
तजहु कुसब्द बोलु सुभ बानी, अपने मारग चलिये ।
करि बिवेक अरु समुझि ज्ञान तैं, भरम भुलाइ न परिये ॥२॥
करम काँठा† पर मारग आहै, खबरदार पग धरिये ।
जगजीवन चलु आपु बचाई, भवसागर तब तरिये ॥३॥

॥ शब्द ४० ॥

साधो नाम जपहु मन जानि ।
जनम पाइ सुफल करि जावहु, दृढ़ प्रतीत जिय आनि ॥१॥
रहहु गुप्त गहे अंतर माँ, मानहु लाभ न हानि ।
अस दृढ़ भक्ति करहु गहि चित महँ, कहत हौं भेद बखानि ॥२॥
हर्ष सोक ते समुझे रहिये, ज्ञान तत्त लै छानि ।
इत उत कबहुँ चलै मन नाहीं, रहि अंतर ठहरानि ॥३॥
ऐसो जुगत जगत माँ रहिये, सीतल सील पिछानि ।
जगजीवन अमृत पिउ अम्मर, जोतिहिं रहहु समानि ॥४॥

॥ शब्द ४१ ॥

अब जग पस्यो धूमा धाम ।
चेत नाहीं अहै गाफिल, भजत नाहीं नाम ॥१॥
करत है कुटिलाइ निंदा, काम करम हराम ।
पछिताहुगे मन समुझु तकु तन, होइ दुक्ख बियाम ॥२॥

---

*मस्त । †काँटा ।

काटिहैं जम दूत कुल्हरी, अइहै नहिं कोइ काम ।
होइहि नास निरास होइहै, भूलिहै धन धाम ॥३॥
झूठ कहि बहु करहि बातैं, खाइ फूलि अराम ।
तोरि पाँजर नरी* दाबहिं, भूलिहै इतमाम† ॥४॥
देहु नहिं दुःख दया राखहु, गहहु मन महँ नाम ।
जगजीवन बिस्वास करि, सो पाइ सुख बिस्राम ॥५॥

॥ शब्द ४२ ॥

मन महँ नाम हीं भजि लेहु ।
बहुरि फिरि पछिताहुगे बहु, दोस नाहीं देहु ॥१॥
करहु अंतर ज्ञान अपने, जियत सब तजि देहु ।
अंत भल कछु होय नाहीं, कागद गलि ज्यों मेहु‡ ॥२॥
भूलु नहिं जग देखि माया, छुटहिं सबै सनेहु ।
गहु बिचारि सँभारि के चित, झूँठि काया गेहु ॥३॥
देखु नैन उघारि जग सब, जात लेहू लेह ।
जगजिवनदास करार नाहिं, गुरु चरन सीसहि देहु ॥४॥

॥ शब्द ४३ ॥

साधो देखि करै नहिं कोई ।
देखी करै बूझि नहिं आवै, भरम भुलाने सोई ॥१॥
जे साधुन तें करै समिताई, परै नरक महँ सोई ।
विद्या बाद विवाद करहि हठ, गयो सब सो खोई ॥२॥
बहु बकवाद चित्त थिर नाहीं, कहि भाखहुँ मैं तोई ।
भजन विहून मोह के बस परि, मुक्ति न कैसेहु होई ॥३॥
सो ऐसै सब देखि परतु हैं, भक्त है बिरला कोई ।
जगजीवन गुरुहिं मन सुमिरहु, सूरति चरन समोई ॥४॥

* नटई, गला । † इहतिमाम । ‡ बरसात ।

॥ शब्द ४४ ॥

निर्भय ह्वै के नाचु, नाम धुन लाव रे ॥टेक॥
इतनी बिनती सुनि लेव मेरी, इत उत कतहुँ न धाव रे ॥१॥
औसर बीति बहुरि पछितैहौ, याही बना बनाव रे ॥२॥
देखु बिचारि कोऊ थिर नाहीं, कोऊ रहै न पाव रे ॥३॥
दुइ अच्छर अंतर रटि रहहू, तत्त सो मंत्र सुनाव रे ॥४॥
जगजीवन बिस्वास आस गहु, चरनन सीस नवाव रे ॥५॥

॥ शब्द ४५ ॥

साधो भक्ति करै अस कोई ।
जगत रमै अस सहज रीति तें, हर्ष सोक नहिं होई ॥१॥
रमत रहै मन अंतर भीतर, जिभ्या बोलै न सोई ।
जो बोलै तौ डोलै वह मत, पुष्ट न कबहूँ होई ॥२॥
कैसे जपैं मंत्र वह अजपा, दुबिधा तें गा खोई ।
जक्त बेद के भेदहिं अटके, रहे बिमुख ह्वै रोई ॥३॥
तीरथ ब्रत तप दानहिं भूले, अभिमानहिं बिष बोई ।
आसा बाँधिनि भये निरासा, पछिताने मन वोई ॥४॥
काया यह तौ अहै खाक की, किलबिष अहै समोई ।
न्रिमल होए कै नहिं उपाय कछु, केतो जल से धोई ॥५॥
लावत खाक खाक मन नाहीं*, भ्रमि भ्रमि ज्ञान बिगोई ।
मैं तैं पड़ा करम की फाँसी, नहीं जोग दृढ़ होई ॥६॥
कबिता पंडित सुरता ज्ञानी, मन महँ देख्यो टोई ।
सोभा चाहि के भूलि फूलिगे, वह सुधि गई बिछोई† ॥७॥
मन मथि मनि लै लाइया रस, लीन्ह्यो तत्त बिलोई ।
जगजीवन न्यारे निर्बानी, मस्त भे चरन समोई ॥८॥

---

* शरीर पर भस्म मल ली पर मन को भस्म नहीं किया । † छूटा, दूर ।

॥ शब्द ४६ ॥

साधो कलि* जन† बिरला कोई ।
भक्त सो जग रहि न्यारे सब त, अंतर डोरि दृढ़ होई ॥१॥
कोऊ अन्न तजै पय पीवै, बरत रहै सब कोई ।
महिमा जानत आवत नाहीं, गये सर्ब सो खोई ॥२॥
कोऊ धावत तीरथ न्हावै, मन नहिं देख्यो टोई ।
स्थाने हइ मन मैल महा अघ, निर्मल कबहुं न होई ॥३॥
छाँड़त लोन मोम दिल नाहीं, करत तपस्या सोई ।
कंद मूल खनि‡ खात जँगल माँ, ऐसहुँ भक्ति न होई ॥४॥
तन दाहत कर धौंचहिं तूरत,§ ठार‖ रहत है सोई ।
आसन मारि बिबौरी¶ होवै, तबहूँ भक्ति न होई ॥५॥
माला सेल्ही लिहे सुमिरनी, तिलक देहि रचि सोई ।
भस्म लाइ मौनी ह्वै बैठे, तबहूँ भक्ति न होई ॥६॥
जगत रहै सोवै नहिं कबहूँ, गावै बजावै सोई ।
महा दीन ह्वै रहे जगत माँ, तबहूँ भक्ति न होई ॥७॥
पढ़ै पुरान गरंथ रात दिन, करै कबिताई सोई ।
ज्ञान कथै पद सब्द कहै बहु, तबहूँ भक्ति न होई ॥८॥
दीन्हेउ केहु चढ़ाइ गगन कहँ, आइ नीचे रहे रोई ।
थिर ह्वै वहाँ रहन नहिं पावै, माया रहे समोई ॥९॥
सतगुरु पारस जेहिं काँ वेधा, मन का मैल गा धोई ।
जगजीवन ते भक्त कहाये, सूरति बिलग न होई ॥१०॥

---

* कलियुग में । † भक्त । ‡ खोद कर । § ऊर्द्धबाहु का भेष धरना । ‖ बर्फ़ में रहना या ठाढ़े यानी खड़े रहना । ¶ जिस के बदन पर मिट्टी जम जाने से दीमकों ने बिमौट यानी बिल बना लिये हैं ।

॥ शब्द ४७ ॥

तूँ गगन मँडल धुनि लाव रे ॥टेक॥
सुरति साधि के पवन चढ़ावहु, सकल सबै बिसराव रे ॥१॥
थिर ह्वै रहि ठहराय देखु छबि, नयन दरस रस पाव रे ॥२॥
सो तुम होहु मस्त लै मनुआँ, बहुरि न एहि जग आव रे ॥३॥
जगजीवनदास अमर डरपहु नाहिं, गुरू के चरन चित लाव रे ॥४॥

॥ शब्द ४८ ॥

यहि बन गगन बजाव बँसुरिया ।
कौनहुँ नहिँ गुमान तकि भूलौ, अंग अंग गलि जाइ पसुरिया १
इहाँ तो कोइ रहै नहिँ पाइहि, चला जात है साँझ सवेरिया ।
धैकै पकरि बाँधि लैजाई, कोउ न राखि सकहि बरियरिया* ॥२॥
एहि का अंत खोज कछु नाहीं, आवत जात रहट की घरिया ।
कोउ फूटत कोउ छूँछ पानि नाहिँ, कौनिउ जात अहै जल भरिया ३
अब तू दौरि धाइ नहि भटकसि, ले सँवारि नहिं होवे करिया ।
जगजीवन निर्मल छबि मूरति, निरखु देखु मन मस्त करैया ४

॥ शब्द ४९ ॥

सुनु बिनु नाम नहिँ निस्तार ।
बेद ज्ञान गरंथ भाखै समुझु सो तत सार ।१।
भूलु नाहिँ सम्हारु आपुहिँ कठिन माया जार ।
डारि फाँसी बाँधि लैहै नाहिँ छूटनहार ॥२॥
जानि पायो जुगति ऐसी नाम अजपा धार ।
ताहि सँग तू रंग रस लै पहुँचु गुरु दरबार ॥३॥
गुरू का चौगान आसन निर्मलं उँजियार ।
पहुँचि निरखु बिहूना† नैना लागिहै तब पार ॥४॥

* ज़बरदस्ती से । † बिना, बग़ैर ।

सीस दैकै रहौ चरनन त्यागु सबं बिचार ।
जगजिवन दासं भक्त होवै छूटि माया जार ॥५॥

॥ शब्द ५० ॥

साधो भक्ति करै अस कोइ ।
अंतरै दुइ अच्छर सुमिरै, भक्त तबहीं होइ ॥१॥
तजै बाद बिबाद सब तैं, दुक्ख नहिं केउ देइ ।
रहै सहज सुभाव अपने, भक्ति मारग सोइ ॥२॥
करै नहि कछु डिंभ कबहूं, डारि मैं तैं खोइ ।
दीन लीनं सीतलं मन, गुप्त राखै सोइ ॥३॥
कहै नहिं कछु प्रगट भेदं, चिंत्त चरन समोइ ।
जगजिवन बहु बकबाद त्यागै, निर्मलं तब होइ ॥४॥

॥ शब्द ५१ ॥

अरे मन भजहु अजपा बानि ।
भूलु नहिं तकि जगत माया, सर्ब बिरथा जानि ॥१॥
भाग बड़ नर दैंह पायो, समुझि नहिं मन आनि ।
अंत फिर पछिताइहौ, जब होइ तन की हानि ॥२॥
करहिं त्रास निरास होइहौ, दूध नीर ज्यौं छानि ।
काम नहिं कोइ आइहै, फिर खैंचि लैहै तानि ॥३॥
काल करिहै हालि औरै, मानिहै नाहिं कानि ।
खाँड जैसे मिलाइ तक्कर*, पाइ जाइहि सानि ॥४॥
जिवत लेहु सँवारि तन मन, वारि प्रीतिहिं ठानि ।
जगजीवन अब नाहिं डर, जौ चरन रहि लपटानि ॥५॥

॥ शब्द ५२ ॥

अरे मन अनत नाहीं धाव ।
गगन कोठे बैठि रहु तैं, सकल सब बिसराव ॥१॥

---

* मट्ठा ।

तखत नीचे बैठि रहि करि, माथ गुरु काँ नाव ।
ले सँभारि सँवारि आपुहिं, मिलहि नहिं फिर दाव ॥२॥
भूलि के तू फूलु नहि जग, झूठ सबै बनाव ।
अचल नहिं चलि जायगा, सब मृतक काया गाँव ॥३॥
अमर होउ सत परस करि के, देत इहै सिखाव ।
जगजीवन के सत्तगुरु तुम, दास तुम्हरै आउँ ॥४॥

॥ शब्द ५३ ॥

सुनु सखि अब मैं कहौं समुझाई ।
बिनु पिय भेँट भटकि तुम फिरिहौ, इहै मंत्र मैं कहा सुनाई १
करहु बिचार सँवार चहौ जो, कहौँ करहु सो तैसै जाई ।
यह उपदेस अँदेस मिटैहै, गहु दृढ़ मता छाड़ु दुचिताई ॥२॥
पाँचो साथ हितू तोरे बैरी, पल पल देत इहै भरमाई ।
नारि पचीस लिहे सँग डोलहिं, इन तेँ नहि कछु तोर बसाई ३
एइ सब लाइ लेहु सँग अपने, गगन मँदिल चल पहुँचो जाई ।
सात भँवरि करि पिय तेँ भेँटो, सर्व कल्पना सो मिटि जाई ४
निरति निरखि करि यह मति तुम्ह मिलि, कबहुँ न छूटै अचल सगाई ।
जगजीवन सखि होइ सोहागिन, सत की सेज सूति सुख पाई ५

॥ शब्द ५४ ॥

नैनन देखि कहा नहिं जाई ।
भजहि न नाम काम करि जग के, कहहिँ बहुत अधिकाई १
बहु बकबाद बिबाद करहिँ हठ, केतौ कहौ समुझाई ।
निंदा करहिं आपनी मानहिं, परहिं नरक महँ जाई ॥२॥

माला सेल्ही पहिरि सुमिरिनी, चंदन तिलक बनाई ।
सुमति सील तेँ न्यारे बासी, जगतहिं ठगहिं सिखाई ॥३॥
काया गुदरा पहिरे डोलहिं, समुझि देखु मन भाई ।
जगजीवन जग सहजै रहिये, मन तेँ डोरि लगाई ॥४॥

॥ शब्द ५५ ॥

ए मन जोगी करहु बिचारा ।
कहँ तेँ आइसि अहसि कहाँ अब, कहाँ तोर घर द्वारा ॥१॥
को तैँ अहसि चीन्हु तैँ आपुहिं, का हित भयो बिसारा ।
उलटि बिचारु बिसारु जगत सब, साँईं जहाँ तुम्हारा ॥२॥
आयो फूटि टूटि नीरहिं मिलि, माया काँ बिस्तारा ।
तेहि रत भये गये अभिमानी, कबहुँ न कीन्ह सम्हारा ॥३॥
खबरदार हो खाक लाव सत, सुन्यं होहु बिचारा ।
जगजीवन आसन दृढ़ करि कै, बैठु जहाँ उँजियारा ॥४॥

॥ शब्द ५६ ॥

कलि की रीति सुनहु रे भाई ।
माया यह सब है साँईं की, आपुनि सब केहु गाई ॥१॥
भूले फूले फिरत आय पर, केहु के हाथ न आई ।
जो है जहाँ तहाँ हीं है सो, अंत काल चाले पछिताई ॥ २ ॥
जहाँ होय नाम कै चरचा, तहाँ आइ के और चलाई ।
लेखा जोखा करहिं दास का, पड़े अघोर नरक महँ जाई ॥३॥
बूड़हि आपु औरन कहँ बोरहिं, करि झूठी बहुतक बकताई ।
जगजीवन मन न्यारे रहिये, सत्त नाम तेँ रहु धुनि लाई ॥४॥

॥ शब्द ५७ ॥

नाम बिनु नहिं कोउ कै निस्तारा ॥ टेक ॥
जान परतु है ज्ञान तत्त तेँ, सेँ मन समुझि विचारा ।
कहा भये जल प्रात अन्हाये, का भये किये अचारा ॥१॥

कहा भये माला पहिरे तैं, का दिये तिलक लिलारा।
कहा भये व्रत अन्नहिं त्यागे, का किये दूध अहारा ॥२॥
कहा भये पँच अगिन के तापे, कहा लगाये छारा।
कहा उर्धमुख धूमहिं घोंटे, कहा लोन किये न्यारा ॥३॥
कहा भये बैठे ढाढ़े तैं, का मौनी किहे अमारा*।
का पँडिताई का बकताई, का बहु ज्ञान पुकारा ॥४॥
गृहिनी† त्यागि कहा बन बासा, का भये तन मन मारा।
प्रीति बिहून हीन है सब कछु, भूला सब संसारा ॥ ५ ॥
मंदिल‡ रहै कहूँ नहिं धावै, अजपा जपै अधारा।
गगन मँडल मनि बरै देखि छवि, सोहै सब तैं न्यारा ॥६॥
जेहि बिस्वास तहाँ लै लागी, तेहि तस काम सँवारा।
जगजीवन गुरु चरन सीस धरि, छूटि भरम कै जारा ॥७॥

॥ शब्द ५८ ॥

साधो सहज भाव भजि रहिये।
दुइ अच्छर अंतर महँ गहि रहि, भेद न काहु तैं कहिये ॥१॥
जस बस्ती तैसे जंगल है, तस गृह एकहि फहिये§।
एहि उपाय तैं पाय नाम कहँ, भक्त होन जब चहिये ॥ २ ॥
भाग जागि तब जानु अपना, निसु दिन नहिं बिसरैये।
लागी रहै लगाये ऐसे, दरसन अंतर पैये।
भेट भई सतगुरु तैं तबहीं, मगन मस्त ह्वै रहिये।
जगजीवन करि आस नाम की, नैन निरखि छवि रहिये।

---

* संध्या (जप की)। † स्त्री। ‡ घर। § समझो।

॥ शब्द ५९ ॥

साधो मन नहिँ अंत बहाव।
जो मन बहै तो रहै कवन बिधि, गहै कवन बिधि नाँव ॥
पाली* नेत्र बास है तहवाँ, तकि चलि इहै सुभाव।
धावत पल पल जो हितु लागत, तहँ करत बेलमाव† ॥
काया गढ़ यह गगन कोठरी, तहाँ खैंचि बैठाव।
जो कहुँ जाय जाय नहिँ पावै, तहाँ ऐँचि लै आव ॥ ३ ॥
रहु थिर तहँ ठहराइ बैठिकै, सत्त सुकृत लै लाव।
जगजीवन निर्गुन निर्बानी, सीस चरन तर लाव ॥४॥

॥ शब्द ६० ॥

आइ जग काहे मन बौराना ॥टेक॥
जौन कौल करि व्हाँ तैँ आयो, समुझि देखु वह ज्ञाना ॥१
तकि माया वस भूलि परेसि तैँ, सत्त नाम नहिँ जाना ॥२
जो उपजा सो बिनसि जायगा, होइ है अंत चलाना ॥३॥
सब चलि जाइ अचल नहि कोई, ससि गन मुनि जन भाना ॥४
जगजीवन सतगुरु समरथ के, चरन रहौ लपटाना ॥५॥

॥ शब्द ६१ ॥

साधो बिनु सुमिरन तरिहैँ नाहीँ।
दान पुन्न के रहहिँ भरोसे, केतो तिरथ नहाहीँ ॥१॥
वृच्छ दान फल देत और कहँ, वै तौ बलदे‡ नाहीँ।
दादुर देँह वर्ग नाहिँ बलदे, वसे रहैँ जल माहीँ§ ॥२॥
कन्द मूल भछि पवन अहारी, पय पी तनहिँ दहाहीँ।
नहि निर्बाह अहै याहू तैँ, परहिँ अंत भव माहीँ ॥३॥

---

* प्रकाश। † ठहराव। ‡ बदले। § मेंढक की जाति पानी में रहने से नहीं बदल जाती।

आसन मारि रहैं दृढ़ बैठे, अन्तर सूझै नाहीं।
मन महँ फूलि भूलि गे डोरी, अंत काल पछिताहीं ॥४॥
होइ निसंक नाम कीरति गहु, रहु थिर अंतर माहीं।
जगजीवन गुरु बास गगन महँ, सूरति राखहु ताहीं ॥५॥

॥ शब्द ६२ ॥

अरे मन अबहूँ नामहिं जान।
आयेहु कौल करि भूलेहु सुख माँ, काहे भयहु हेवान ॥१॥
जामा साँई सो पहिरायो, तेहि का कौन गुमान।
केते गये पुराने चिराने, अनगन करूँ न बयान ॥२॥
टोपो सिखर बास करु तहवाँ, परसु सुरति निर्बान।
छबि अनूप कछु बरनि न आवै, रवि ससि करौं कुर्बान ॥३॥
देखत रहहु दृष्टि नहिं टारहु, इहै सिखावौं ज्ञान।
जगजीवन बिस्वास किहे रहु, और नहीं कछु आन ॥४॥

---

## ॥ भेद बानी ॥

॥ शब्द १ ॥

रँगि रँगि चँदन चढ़ावहु, साँईं के लिलार रे ॥टेक॥
मन तें पुहुप माल गूँधि कै, सो लै कै पहिरावहु रे।
बिना नैन तें निरखु देखु छबि, बिन कर सीस नवावहु रे ॥१॥
दुइ कर जोरि कै बिनती करि कै, नाम कै मंगल गावहु रे।
जगजीवन बिनती करि माँगे, कबहुँ नहीं बिसरावहु रे ॥२॥

॥ शब्द २ ॥

देखि कै अचरज कह्यो न जाई।
तीन लोक का जो बनाव है, सो नर देँह बनाई ॥१॥

नख सिख पग कर पेट पीठि करि, सब रचि एकै लाई।
तेहि माँ लाइ पवन एक पंछी, सर्ब अंग कै राई* ॥२॥
पाँच पचीस ताहि अरुझायो, रच्यो स्वाद अधिकाई।
अपनी अपनी धावन धावैँ, लाग्यो करन कमाई ॥३॥
पस्यो कर्म बस बिसरि गयो सब, सुधि बुधि नाहिँ समाई।
निसि बासर भरमत ही बीतत, चेत हेत नहिँ आई ॥४॥
वहि घर की सुधि बिसरि गई है, जेइ करि कौल पठाई।
बंदा तेँ ह्वैगे फिरि गंदा, चले अंत पछिताई ॥५॥
भूला सबै देखि धन माया, केहु के हाथ न आई।
झूठी आस प्यास पी माते, डारिन्हि सबै नसाई ॥६॥
अहै अचेत सचेत होत नहिँ, केतौ कहै बुझाई।
आइ जगत माँ बिंदु बुंद भा, बुंद मेँ गयो समाई ॥७॥
अबहूँ समुझि देखु मन बौरे, कहत सो अहैं चेताई।
जगजीवन कहँ प्रीति नाम से, सकल धंध बिसराई ॥८॥

॥ शब्द ३ ॥

प्रान एहुँ आइ चेत नहिँ कीन्हा।
निर्गुन तेँ पयान करि आवा, नाहिँ आपु का चीन्हा ॥१॥
वहि मन मिलि कै करता ह्वैगा, अग्नि ज्वाल करि लीन्हा।
तेहीँ ज्वाल तेँ बुंद निकास्यो, पिंड साज छिन कीन्हा ॥२॥
रुचि भे वहुत तयाग नहिँ जावै, मैँ मैँ करि भे लीना।
परे कर्म बसि हेत गयो वहु, पाछिल सुधि तजि दीन्हा ॥३॥
सुद्धि सँभारि विचारि लागि रहु, निर्मल नाम गहि लीन्हा।
जगजीवन ते निर्गुन समाने, चरन कमल चित दीन्हा ॥४॥

* राजा।

॥ शब्द ४ ॥

साधो कवन कहै कथि ज्ञाना ।
उत्तम मधिम पान यहु नाहीं, नाहीं पवन प्रमाना ॥१॥
नहिं सीतल नहिं गरम ग्रहै यह, नाहीं रुचि कछु ग्राना ।
रचि रचि करि मिलिगा सब माँ है, है न्यारा निर्बाना ॥२॥
खात पियत डोलत सो ग्रापुहिं, कहै कि मैं नहिं जाना ।
माया माति* नाच सो नाचै, मैं हौँ पुरुष पुराना ॥३॥
ना मैं ग्रायो गयो कहुँ नाहीं, सर्गुन नाहिं बखाना ।
जगजिवनदास नाम तें लीना, चरन कमल लपटाना ॥४॥

॥ शब्द ५ ॥

साधो को धौं कहँ तें ग्रावा ।
कहँ तें ग्राय कहाँ को ग्ररुझा, फिरि धौं कहाँ पठावा ॥१॥
सो ग्रँदेस सोच मन मोरे, कछु गति जानि न पावा ।
नीरभ† पिता रुधिर माता करि, तेहि तैं साजि बनावा ॥२॥
नस ग्रौ हाड़ चाम मास करि, नौ दस द्वार बनावा ।
दसौ बन्द दरवाजा कीन्ह्यौ, सबै जोरि गँठि लावा ॥३॥
सादी‡ पाँच बसे तेहि नगरी, हित बिष रस मन भावा ।
मिलि कै ताहि पचीस संग है, सुमति सुभाव लुटावा ॥४॥
करि परपंच रैन दिन बितयो, मैं तैं जन्म गँवावा ।
तीनिउ चौंपल साजि लीन्ह जिन, तिनकाँ मन घिसरावा ५
माया प्रबल तिमिर नहिं सूझै, जेहि हित नाम बतावा ।
जगजीवन भव धार पार है, ग्रभय ग्रलख गुन गावा ॥६॥

* माशक । † वीर्य्य । ‡ सादी=स्वादी ग्रर्थात् रस लेने वाले ।

॥ शब्द ६ ॥

मन गहु सरन सतगुरु आय ॥ टेक ॥

कोट काया गगन मंदिर, तहाँ थिर भा जाय।
बैठि सब तें ऐंठि कै, जग डारि दे बिसराय ॥१॥
साथ के आनाथ भे वे, एक रहि खिसियाय।
डोरि पाँच पचीस एकहि, बाँधि कसि अरुझाय ॥ २ ॥
टरे नहिं टक लाय पोवै, अमी अधिक हिताय।
तृप्त कबहूँ होत नाहीं, प्यास नाहिं बुताय ॥ ३ ॥
लागि पागि कै मस्त भै, सिर धुजा सत फहराय।
जगजिवन जीवै मरै नाहीं, नाहिं आवै जाय ॥ ४ ॥

॥ शब्द ७ ॥

साधो कौन धौं आहि।

कौन डोलत कौन बोलत कौन है सब माहि ॥ १ ॥
कहाँ तें बिस्तार कीन्ह्यो, कहाँ आय समाहि।
समुझि अचरज होत आहै, कहाँ धौं फिरि जाहि ॥ २ ॥
बना काया कोट बास, मवास* कोट के माहि।
कोट टूटा कर्म फूटा, रह्यो फिर कछु नाहि ॥ ३ ॥
गाँव ठाँव औ नाँव नाहीं, गैब गैबी माहिं।
होय यहु मन जीव तेहि मिलि, एक दूसर नाहिं ॥ ४ ॥
लेहु अब पहिचानि औसर, बहुरि पैहहु नाहिं।
जगजिवनदास सँभार करिकै, चरन भजु मन माहिं ॥ ५ ॥

॥ शब्द ८ ॥

साधो इक बासन गढ़ै कुम्हार।

तेहि कुम्हार का अंत न पावै, कैसे सिरजनहार ॥१॥

---

* रक्षा, पनाह।

अग्नि उठाय निकासत पानी*, रचि रँगि रूप सँवार।
तीन चौथ दरवाज बनायो, नौ महँ नाहिँ किवार ॥ २ ॥
भीतर रंग बिरंग तिरंगैँ, उठत अहहिँ धुधकार।
पवन ब्रम्ह तहँ बाजहि आपुहिँ, आपु बजावनहार ॥ ३ ॥
आपु जनावत आपुहिँ जानत, आपुहिँ करत बिचार।
आपुहिँ ज्ञान ध्यान तँ लाग्यो, आपु बिवेक बिस्तार ॥ ४ ॥
छिन छिन गावत छिन छिन रोवत, छिन छिन सुरति सुधार।
जगजीवन आपुहिँ सब खेलत, आपुहिँ सब तेँ न्यार ॥ ५ ॥

॥ शब्द ९ ॥

साधो साध अंतर ध्यान।
दीन लीनं सीतलं ह्वै, तजहु गर्ब गुमान ॥ १ ॥
गंग ग्राम बजार लावहु, चित्त गाड़ु निसान।
सत्त हाट निहारि निरखहु, लेहु करि पहिचान ॥ २ ॥
रैन दिन तहँ नाहिँ आहै, नाहिँ ससि गन भान।
चमक झलमल रूप निर्मल, निर्गुनं निर्बान ॥ ३ ॥
सुद्धि बुद्धो नाहिँ आहै, कौन भाषै ज्ञान।
जगजिवनदासं मस्त होवै, बिरल कोउ ठहरान ॥ ४ ॥

॥ शब्द १० ॥

मन रे आप काँ तैँ चीन्ह।
आस कै घर कहाँ आहै, कहाँ बासा लीन्ह ॥ १ ॥
चेत करु अब हेत उन तेँ, जिन रे यहु सब कीन्ह।
डारि दीन्ह बहाइ तुम कहँ, दगा तुम तेँ कीन्ह ॥ २ ॥

* बीर्य्य।

आइ पर घर पहिरि जामा, जगत बासा लीन्ह ।
संग तेहिं बहुरंग तसकर*, बड़ा अजुगुति कीन्ह ॥ ३ ॥
ऐंचि खैंच लगाव धागा, तिलक दै सत चीन्ह ।
जगजिवन गुरु चरन परि कै, जुग जुग अम्मर कीन्ह ॥४

॥ शब्द ११ ॥

काया कैलास कासी राम सो बनायो ॥ टेक ॥
जा को वार पार नाहिं, अंत नाहि पायो ।
तीनि लोक दस दुआर, दरवाज नाहिं लायो ॥ १ ॥
तीरथ तेहि माँ कोटिन्ह, गुरू सो बतायो ।
तस्कर तहँ बहुत पाँच, अपथ ही चलायो ॥२॥
पचीस सेन बाँधि साथ, जहँ तहँ उठि धायो ।
लागे सब बिगारन हिं, से रावन दुख पायो ॥३॥
चौंकि मनुवाँ जागि धागा, गगनहि गढ़ लायो ।
जगजिवन उसवास† मिटि गा, दरस सतगुरु पायो ॥ ४

॥ शब्द १२ ॥

अरे मन रहहु थिर ठहराय ।
वेद ग्रंथ संत संत कहि, सुकृत दीन्ह लखाय ॥ १ ॥
गगन मंडप बना है, तहँ अचल बैठहु जाय ।
तजहु आस निरास ह्वै कै, देहु सब बिसराय ॥ २ ॥
भान गन ससि नाहिं निसु दिन, पवन नहिं संसाय ।
चमक झलमल रूप निर्मल, रहहु इक टक लाय ॥ ३
तजहु नहि परसंग कबहूँ, बैठि जुगहिँ दृढ़ाय ।
जगजिवन निर्वान सतगुरु, चरन रहु लपटाय ॥ ४ ॥

---

* ठग । † अंदेसा ।

॥ शब्द १३ ॥

बिरिछ* के ऊपर मँदिल बनावा।
ताहि मँदिल इक जोगी आवा ॥ १ ॥
जोगी भागि अनत काँ जाय, मन्दिल अपने मन पछिताय ॥२॥

॥ दोहा ॥

ताहि मन्दिल को गृह भयो, ता मैं दिसि न दुवार।
ता के भीतर रहत है, बिधना देत अहार ॥ ३ ॥

॥ शब्द १४ ॥

सखि बाँसुरी† बजाय कहाँ गयो प्यारो ॥ टेक ॥
घर की गैल बिसरि गै मोहिं तैं, अंग न बस्त्र सँभारो।
चलत पाँव डगमगत धरनि पर, जैसे चलत मतवारो ॥ १ ॥
घर आँगन मोहिं नीक न लागै, सब्द बान हिये मारो।
लागि लगन मैं मगन वही सोँ, लोक काज कुल कानि बिसारो २
सुरत दिखाय मोर मन लीन्ह्यो, मैं तौ चहौं होय नहिं न्यारो।
जगजीवन छबि बिसरत नाहीं, तुम से कहौं सो इहै पुकारो ॥३॥

॥ शब्द १५ ॥

साधो बूझे बिनु समुझि न आवै।
अंध अहै भव जाल मैं बंधा, को कहि कै गोहरावै ॥ १ ॥
बाहर निसु दिन भटकत भरमत, थिर नाहिं कबहूँ आवै।
बूड़त जानि मानि भवसागर, अवरन कहँ समुझावै ॥ २ ॥
बहु बकताई करत फिरत है, रचि बहु भेष बनावै।
सिख पढ़ि करहि बिबाद जहाँ तहँ, आपन अंत न पावै ॥३॥
पाइ जोग केहु भेद भाँड़ गति, गहि दम साँस न आवै।
दुखित होत तन फूलि मसक से, दुइ कर पेट ठठावै ॥४॥

---

* पेड़। † भंवर गुफ़ा का शब्द।

यहु नहिँ जोग रोग है भाई, साधू नाहिं बतावै ।
सहज रीति मन साध पवन गहि, अठदल कमल समावै ॥ ५ ॥
अजपा जपत रहै बिन जिभ्या, मधुर मधुर मधु पावै ।
ह्वै मस्तान मगन ह्वै गावै, बहुरि न यहि जग आवै ॥ ६ ॥
अस मत गहे रहै केहू बिधि, काहु न भेद बतावै ।
जगजीवन सुख तब हीं पावै, सूरत सत्त मिलावै ॥७॥

॥ शब्द १६ ॥

साधो को धौं कहँ तेँ आवा ।
खात पियत को डोलत बोलत, अंत न काहू पावा ॥ १ ॥
पानी पवन संग इक मेला, नहिँ बिबेक कहुँ गावा ।
केहि के मन को कहाँ बसत है, केइ यहु नाच नचावा ॥२॥
पय महँ घृत घृत महँ ज्योँ बासा, न्यारा एक मिलावा ।
घृत मन बास पास मनि तेहि माँ, करि सो जुक्ति बिलगावा ३
पावक सर्ब अंग काठहि माँ, मिलि कै करखि* जगावा ।
ह्वै गे खाक तेज ताही तेँ, फिर धौं कहाँ समावा ॥ ४ ॥
भान समान कूप सब छाया, दृष्ठ सबहिं माँ आवा ।
परि घन† कर्म आनि अंतर महँ, जोति खैँचि लै आवा ॥५॥
अस है भेद अपार अंत नहिं, सतगुरु आनि बतावा ।
जगजीवन जस बूझि सूझि भै, तेहि तस भाखि जनावा ॥६॥

॥ शब्द १७ ॥

जा के लगी अनहद तान हो, निरबान निरगुन नाम की ॥१॥
जिकर करके सिखर हेरे, फिकर रारंकार की ॥ २ ॥
जा के लगी अजपा झलकै, जोत देख निसान की ॥३॥
मद्ध मुरली मधुर बाजै, बाँए किंगरी सारँगी ॥ ४ ॥

* घौंक कर । † बादल रूपी कर्म ।

दहिने जो घटा संख बाजै, गैब धुन झनकार की ॥ ५ ॥
अकह को यह कथा न्यारी, सीखा नाहीं आन है ॥६॥
जगजीवन प्रान सोध के, मिल रहे सतनाम है ॥ ७ ॥

॥ शब्द १८ ॥

साधो समुझि बूझि मन रहना ।
डोरी पोढ़ि लाय कै रहिये, भेद न काहू कहना ॥ १ ॥
गुरु परताप नाम जिन पायो, बड़े ताहि के लहना ।
लियो सभारि सँवारि पवन गहि, गगन मँदिल ठहराना ॥२॥
चाँद सुरज दिन रजनी नाहीं, सब्द रसालहिं ज्ञाना ।
सिव ब्रह्मा बिस्नू मन तहवाँ, अलख रूप निरबाना ॥ ३ ॥
रहु लव लाइ समाइ छबिहिं तकि, जग तें किहे बहाना ।
जगजिवनदास धन्न वै साधू, सदा रहैं मस्ताना ॥ ४ ॥

॥ शब्द १९ ॥

गगरिया मोरी चित सोँ उतरि न जाय ॥ टेक ॥
इक कर करवा* एक कर उबहनि†, बतिया कहौं अरथाय ॥ १ ॥
सास ननद घर दारुन आहैं, ता सौं जियरा डेराय ॥ २ ॥
जो चित छूटै गागारि फूटै, घर मोरि सासु रिसाय ॥३॥
जगजीवन अस भक्ती मारग, कहत अहौं गोहराय ॥४॥

॥ शब्द २० ॥

और फिकिर करि फरके‡, जिकिर§ लगाउ रे ॥ टेक ॥
सूरति सूवा‖ करि, गगनै बैठाउ रे ।
तहँ हरि हरि करि, कहि कै पढ़ाउ रे ॥ १ ॥
साँईं एक, एक करि जानु रे ।
दुबिधा नहिं मन, कबहुँ लै आउ रे ॥ २ ॥

---

* डोल। † रस्सी। ‡ दूर। § जाप। ‖ तोता।

जगजिवनदास तहँ, सुरति निहारु रे।
दुई कर जोरि करि, साँई मनाउ रे॥ ३॥

॥ शब्द २१॥

सत्त नाम मन गावहु रे॥ टेक॥
यहु मन दृढ़ करि अंतर राखहु, अनत न कतहुँ बहावहु रे।१
मैं तैं गर्ब गुमानहिं त्यागौ, दीन सुमति लै आवहु रे॥२॥
वृथा जानि सब नैनन देखहु, अंतर ध्यान लगावहु रे॥३॥
जगजीवन चित चरनन राखहु, कबहुँ नहीं बिसरावहु रे॥४।

॥ शब्द २२॥

सोभा प्रभु की मो से बरनि न जाई॥ टेक॥
अनहद बानी मूरति बोलै, सुनहु संत चित लाई॥ १॥
बिनु कर ताल पखाउज बाजै, तहँ सूरति चलि जाई॥ २॥
अबरन बरन कहाँ लहि बरनौं, सब महँ रह्यो समाई॥ ३॥
जगजीवन सत मुरति निरखि छबि, रहे चरन लपटाई॥ ४।

॥ शब्द २३॥

बौरे मते मंत्र सुन सोई॥ टेक॥
जो सुनि गुनि परतीत करि कै, तब सुख पावै सोई॥ १॥
गुरुसुख मन मनि गगन मँदिल रहि, उहाँ भरम नहिं कोई
चाँद सुरज तेहिं दिप्ति* नहीं सम, संत बास तहँ सोई॥३॥
जगजीवन अस पाय भाग जो, आवागवन न होई॥ ४॥

॥ शब्द २४॥

तुम सोँ लागो रे मोर मनुआ॥ टेक॥
झलझल झलझल देखौं रूप। तुम तें नाहीं और अनूप॥१।
दिप्ति तुम्हारी आहै धूप। तकि परछाँहीं जैसे कूप॥२॥
सो नौखंड मैं साती दीप। जगजिवन गुलाम है तुम हौ भूप

---

*प्रकाश।

# साध महिमा और असाध की रहनी

॥ शब्द १ ॥

जब मन मगन भा मस्ताना ।
भयो सीतल महा कोमल, नाहिं भावै आन ॥१॥
डोरि लागी पोढ़ि गुरु तें, जगत तें बिलगान ।
अहै मता अगाध तिन का, करै को पहिचान ॥२॥
अहैं ऐसे जगत माँ कोइ, कहत आहैं ज्ञान ।
ऐसे निर्मल ह्वै रहे हैं, जैसे निर्मल भान ॥३॥
बड़ा बल है ताहि के रे, थमा है असमान ।
जगजिवन गुरु चरन परिकै, निर्गुनं धरि ध्यान ॥४॥

॥ शब्द २ ॥

अमृत नाम पियाला पिया । जुग जुग साधू सोई जिया ॥१॥
सतगुरु सदा रहै परसंग । मस्त मगन ताही के रंग ॥२॥
ताकि कै अंत कतहुँ नहिं जाय । निर्मल निर्गुन निरखि रहाय॥३॥
जेहि की माया का बिस्तार । को बपुरा करि सकै बिचार ॥४॥
ब्रह्मा थके बेद गुन गाय । थकित भये सिव ताड़ी लाय ॥५॥
ठाढ़े रहहिं बिस्नु कर जोरि । निर्मल जोति अहै तिन्ह कोरि ॥६॥
जगजीवन सो धरि रहे ध्यान । सतगुरु सुरति निर्मल निर्बान ॥७

॥ शब्द ३ ॥

साधो खेलि लेहु जग आय । बहुरि नहीं अस औसर पाय ॥१
जनम पाय चूका सब कोय । अंतर नाम जाहि नहिं होय ॥२॥
जिन केहु उलटि कै बूझा ज्ञान । साधू सोई भया निरवान ॥३॥
तिन पर किरपा कीन्ह्यौ आय । राखि लिह्यौ चरनन सरनाय ॥४

निरखि नैन तें रहि टक लाय । अमृत रस बस पियो अघाय
मरि अम्मर भे जुग जुग सोइ । न्यारे कबहूँ नाहीं होइ ॥
जगजिवनदास धन्य वे साध । तिन का सत मत भेद अगाध

॥ शब्द ४ ॥

गऊ निकसि बन जाहीं । बाछा उनका घर ही माहीं ॥
तृन चरहिं चित्त सुत पासा । यहि जुक्ति साध जग बासा ॥
साध तें बड़ा न कोई । कहि राम सुनावत सोई ॥
राम कही हम साधा । रस एक मता औराधा ॥
हम साध साध हम माहीं । कोउ दूसर जानै नाहीं ॥
जिन दूसर करि जाना । तेहिं होइहि नरक निदाना ॥
जगजिवन चरन चित लावै । सो कहि के राम समुझावै ॥

॥ शब्द ५ ॥

जस घृत पय में बासा । अस कीन्हे रहौं निवासा ॥
साध पुहुप कर नाऊँ । मैं तहँ तैं बास* बसाऊँ ।
अस अहै मोर परसंगा । मैं साध साध मोर अंगा ।
जगजीवन जिन जाना । सो भक्त भयो निर्बाना ।

॥ शब्द ६ ॥

साध कै गति को गावै । जो अंतर ध्यान लगावै ॥१॥
चरन रहे लपटाई । काहू गति नाहीं पाई ॥२॥
अंतर राखै ध्याना । कोइ विरला करै पहिचाना ॥३॥
जगत किहो एहि वासा । पै रहैं चरन के पासा ॥४॥
जगत कहै हम माहीं । वै लिप्त काहु माँ नाहीं ॥५॥
जस गृह तस उदयाना† । वै सदा अहैं निराबाना ॥६॥

---

* सुगंध । † सैरगाह, जंगल ।

ज्यौँ जल कमल कै बासा । वै वैसे रहत निरासा ॥७॥
जैसे कुरम* जल माहीँ । वा की सुति अंडन माहीँ ॥८
भवसागर यह संसारा । वै रहैँ जुक्ति तेँ न्यारा ॥९॥
ज्यौँ मक डोर बढ़ावै । जो नीच ऊँच काँ धावै ॥१०॥
जगजीवन ठहराना । सो साध भया निरबाना ॥११॥

॥ शब्द ७ ॥

मन में जेहि लागी तेहि लागो है ॥टेक॥
रहे बेसुद्ध सुद्धि तब नाहीँ, चौँकि उठे तब जागी है ॥१॥
पाँच पचीस बाँधि इक डोरी, एकौ नहिँ कहुँ भागी है ॥२॥
मैं तैँ मारि विचारि गगन चढ़ि, दरस पाय रस पागी है ॥३॥
गहि सतगुरु के चरन रहे हैँ, मस्त भये बैरागी हैं ॥४॥
जगजीवन ते अम्मर जुग जुग, नहिँ सतसंगति त्यागी है ॥५॥

॥ शब्द ८ ॥

बौरे त्यागि देहु गाफिलाई ।
डरत रहहु मन संत राम कहँ, कहत अहौँ गोहराई ॥१॥
संतन दीन हीन नहिँ जानहु, कठिन तेज अधिकाई ।
जब चाहहिँ तब कहहिँ राम तेँ, लंका पतन कराई ॥२॥
जेहि मन आवत कहत सो तैसे, नाहिँ सकुच कछु आई ।
होहि अकाज ताहि को बहु बिधि, रहिहै मन पछिताई ॥३॥
नृपति होय कि छत्र-पति दुनिया, भूलै ना प्रभुताई ।
रहहि जो संतन तेँ अधीन ह्वै, नहिँ तौ खाक मिलि जाई ।४।
परगट कहौँ छिपावौँ नाहीँ, जुग जुग अस चलि आई ।
जगजीवन आधीन रहैँ जे, तेहि पर रहहिँ सहाई ॥५॥

---

* कछुआ ।

॥ शब्द ६ ॥

नाम रस अमृत पिया। सो जग जनम पाय जन जिया १
पोढ़ि रहत है लाय। सोवत जागत बिसरि न जाय ॥२॥
मन कहुँ अनत न जाय। अंतर भीतर रहै लव लाय ॥३॥
भक्त तेँ नाहीँ न्यारे। कहौँ बिचारि के सब्द पुकारे ॥४॥
जगत महँ यहि बिधि रहहीँ। प्रगट भेद आपन नहिँ कहहीँ ५
तेँ जुदा कहै जो कोई। तेहि कै गति औ मुक्ति न होई॥६॥
के दरस भाग तेँ पाई। है अस मत कोइ नाहिँ भुलाई॥७॥
जीवन निरखै निर्बान। गावत ब्रह्मा बेद पुरान ॥८॥

॥ शब्द १० ॥

ने मन महँ सुमिरहु नाम। बाहर नहिँ कछु सरिहै काम १
मन बाहर जाइहि धाय। बिनु जल गहिरे बूड़हि जाय २
भवजल माँ करहि बिगार। मनहि मारि कै जनम सँवार ३
यहु साँच झूठ है सोई। मन का भेद न पावै कोई ४
के सुख तन का सुख होई। मन छीजे तन सुख नहिँ कोई ५
यहु खात अहै जल पीवै। मन यहु अम्मर जुग जुग जीवै ६
यहु जीव केर मनि आही। मन की मनि मथि संत लखाही ७
न लखि मनि राखि छिपाई। जग सब अंध अंत नहिँ पाई ८
मनि त्रिकुटि गगन महँ बास। छानि तत्त जन करहिँ बिलास ९
। जड़ मूरख चेत न आनि। संत वचन परमान न मानि १०
जिवन दास धन्य वै साध। पाय मता सो भये अगाध ११

॥ शब्द ११ ॥

पु काँ चीन्है नहिँ कोई।
त पियत को डोलत बोलत, देखत नैनन सोई ॥ १ ॥

अचरज सब्द समुझि जो आवै, सब माँ रहा समोई ।
रहै निरंतर बासा कीये, कबहूँ बिलग न होई ॥ २ ॥
अच्छर चारि पँडित पढ़ि भूले, करैं चार्चा सोई ।
साधन की गति अंत न पावत, जेहि का मन मति जोई ॥३॥
जिन जिन तत्तहिँ मथि कै लीन्ह्यो, रहि गहि गुप्तहिँ सोई ।
जगजीवन धरि सीस चरन तर, न्यारे कबहुँ न होई ॥४॥

॥ शब्द १२ ॥

मन महँ राम रमे हैं ताहि ।
लागि जब तें पागि तब तें, अनतै जाहिँ ॥ १ ॥
नाहिँ आसा रही जग की, नाहिँ धाइ अन्हाहिँ ।
सदा सूरत रहैं लाये, जपत हैं मन माहिँ ॥२ ॥
राति दिन वै रहत लागे, साध वोई आहिँ ।
बहु किये पाखंड जग महँ, भक्त हैं ते नाहिँ ॥ ३ ॥
जपहिँ अजपा बकैं ना वह, गुप्त जगत रहाहिँ ।
जगजीवन वै दास न्यारे, जोति महँ मिलि जाहिँ ॥४॥

॥ शब्द १३ ॥

अब कछु नाहि गति कहि जात ।
साध कहि करि करहि दरसन, करहिँ पाछे घात ॥ १ ॥
भेष माला पहिरि लीन्हेव, नाम भजन लजात ।
जहाँ तहाँ परमोध करि कै, स्वान नाइँ खात ॥ २ ॥
दियो अहै बढ़ाय तस्नहि, नाहिँ कछु खिसियात ।
भयो गाफिल भूलि माया, नाहि उद्र अघात ॥ ३ ॥
देखि सिखि पढ़ि लेत आहैं, कहैं सोई बात ।
जहाँ तहाँ बिवाद ठानहि, ओस बुंद बिलात ॥ ४ ॥

साध सत मत रहत साधे, नाम रसना रात ।
जगजीवन सो पास सतगुरु, नाहिँ न्यारे जात ॥५॥

॥ शब्द१४ ॥

जिन के रसना भै नाम अधार ।
तिन के मन का अंत को पावै, ठाढ़ रहत दरबार ॥ १ ॥
तेहि जग कहहि अहहिँ दुनिया महँ, वह दुनिया तेँ न्यार ।
उन के दरस राम के दरसन, मेटत सकल बिकार ॥ २ ॥
छूटत नाहिँ कबहुँ नहिँ टूटै, तजि षट कर्म अचार ।
जानि अजान अज्ञान भे बौरे, नहिँ कोउ परखनहार ॥ ३ ॥
यह गति अहै साध कै रहनी, बिरले हैँ संसार ।
जगजीवन तिन तेँ नहिँ अंतर, तिन का भेद अपार ॥४॥

॥ शब्द १५ ॥

तजि कै बिबाद जक्त, भक्त भजि होवै ॥ टेक ॥
अहंकार गुमान मान, जानि दूरि खोवै ।
काग ऐसो निहचिंत, कबहूँ नहिँ सोवै ॥ १ ॥
रहै गुप्त चुप्प जिभ्या, प्रीति रीति होवै ।
नीर सील सींच सीतल, सहजहीँ समोवै ॥२ ॥
राखि सीस सिखर ऊपर, चरन कमल टोवै ।
नैनन निरखि दरस अमी, अंग ताहि धोवै ॥ ३ ॥
भे हैँ निर्बान साध, काल देखि रोवै ।
जगजीवन त्यागि सर्व, अचल अमर होवै ॥ ४ ॥

॥ शब्द १६ ॥

साध बड़े दरियाव अंत को पावै ।
ज्ञान वास करि पास राम कहि गावै ॥ १ ॥

निर्मल मन निर्बान निर्गुनहिं समावै ।
सतगुरु बैठे पास चरन पै सीस नवावै ॥ २ ॥
सदा हजूरी ठाढ़े निरखि कै दरसन पावै ।
भाखत सब्द सुनाय जगत काँ कहि समुझावै ॥ ३ ॥
जेहि के भै परतीत ताहि काँ भक्ति दृढ़ावै ।
जहाँ नाहिं बिस्वास ताहि तें भेद छिपावै ॥ ४ ॥
जगजीवनदास गुप्त को प्रगट सुनावै ।
जेहि के जैसे भाग सो तैसे पावै ॥ ५ ॥

॥ शब्द १७ ॥

जग में बहुत बिबादी भाई ।
पढ़ि गुनि सब्द लेत हैं बहु बिधि, बातैं करहिं बनाई ॥१॥
आपु न भजहिं गहहिं नहिं नामहिं, औरन कहहिं सिखाई
कहहिं और कहँ तैं भूला है, अपुहिं परे भुलाई ॥ २ ॥
बहुती बातैं जहाँ तहाँ की, आपन कहँ प्रभुताई ।
साधन्ह कहा सब्द सो काटहिं, परहिं नरक महँ जाई ॥ ३ ॥
जो कोउ जग महँ अंतर सुमिरै, ताहि देहिं भटकाई ।
लालच लोभ पुजावै खातिर, डारिन्ह धर्म नसाई ॥४॥
गीता ग्रंथ पढ़िन बहुतै करि, मिटो नाहिं मुरखाई ।
बिद्या मद अंधे है डोलहिं, भिड़हिं साध तें जाई ॥ ५ ॥
कोमल बानी सदा सीतल है, सब काँ सीस नवाई ।
साधन केरे ये लच्छन हैं, करैं ते मुक्तै जाई ॥ ६ ॥
जो पूछै तेहिं राह लगावहिं, नाहिं तो रहहिं छिपाई ।
जगजीवन भजु सतगुरु चरना, बादिहिं देहु बहाई ॥ ७ ॥

---

# ॥ आरती ॥

( १ )

आरति सतगुरु समरथ करऊँ। दोउ कर सीस चरन तर धरऊ १
निरखौं निर्मल जोति तिहारी । अवर सर्बसौ देहुँ बिसारी ॥२
मैं तौ आदि अंत का आहूँ । अवर न दूजा जानौं नाऊँ ॥३
तुम्हरे आहुँ सदा संग बासी । तुम बिनु मनुआँ रहत उदासी ४
रह्यो अजान तुम दियो जनाई । जहाँ रहौं तहँ बिसरिन जाई ५
जगजिवन दास तुम्हार कहावै। जनम जनम तुम्हरो जस गावै ६

( २ )

आरति सतगुरु साहेब करऊँ। आपन सीस चरन तर धरऊँ १
जब तुम मोहिं काँ दाया कीन्हा। आई सूझि बूझि मैं चीन्हा २
पास बास मैं डोलौं नाहीं। गगन मँडल रहौं सत की छाहीं ३
निरखि नैन तैं सुरति निहारौं। रबि ससि नेग* रूप मनि वारौं ४
जगजिवनदास चरन दियो माथ। साहिब समरथ करहु सनाथ ५

( ३ )

आरति गुरु गुन दीजै मोहीं । सुरति रहै नित चरन सनेही ॥१
निकट तैं भटकि कतहुँ नहिं धावै। सोवत जागत ना बिसरावै ॥२
मैं सुधि बुधि तें आहौं हीना । रहौं मैं चरन कृपा तें लीना ३
जो तुम मोहिं काँ जानहु दासा । निर्मल दृष्टि सत दरस प्रकासा ४
जगजीवन दास आपना जानो । अवगुन अध क्रम मनहिं न आनो ॥ ५ ॥

( ४ )

आरति सतगुरु समरथ तोरी। कहँ लगि कहौं केतक मति मोरी १
सिव रहे तारी लाइ न जाना। ब्रह्मा चतुर मुख करहि बखाना २

---

* अनेक।

सेस गनेस औ जपत भवानी । गति तुम्हरी प्रभु तिनहुँ न जानी ३
बिस्नु बिनय मन मनहिँ समाई । कोउ बपुरा गति सकै न गाई ४
ससि गन भान जती सुर सोई । सब माँ बास न दूजा कोई ५
संत तंत तेँ रहे हैँ लागी । जेहि जस चहि तस रहि रस पागी ६
जगजीवन नहिँ थाह अथाहा । कृपा करहु जन कै निर्बाहा ७

( ५ )

आरति अरज लेहु सुनि मोरी । चरनन लागि रहै दृढ़ डोरी १
कबहुँ निकट तेँ टारहु नाहीँ । राखहु मोहिँ चरन की छाहीँ २
दीजै केतिक बास यहँ कीजै । अघ कर्म मेटि सरन करि लीजै ३
दासन दास ह्वै कहौँ पुकारी । गुन मोहिँ नहिँ तुम लेहु सँवारी ४
जगजीवन काँ आस तुम्हारी । तुम्हरी छबि मूरति पर वारी ५

( ६ )

आरति कवन तुम्हारी करई । गति अपार केहु जानि न परई १
ब्रह्मा सेस महेस गुन गावैँ । सो तुम्हार कछु अंत न पावैँ २
तुमहिँ पवन औ तुमहीँ पानी । तुम सब जीव जोति निर्बानी ३
नर्क स्वर्ग सब बास तुम्हारी । कहुँ दुख कहुँ सुख है अधिकारी ४
तुम सब महँ सब तुमहिँ बनावा । रहि रस बस करि नाच नचावा ५
दियो चेतान करि तैसि लखाया । जगजीवन पर करिये दाया ॥६

( ७ )

केतिक बूझ का आरति करऊँ । जैसे रखिहहिँ तैसे रहऊँ ॥१॥
नाहीँ कछु बसि आहै मोरी । हाथ तुम्हारे आहै डोरी ॥२॥
जस चाहौ तस नाच नचावहु । ज्ञान बास करि ध्यान लगावहु ३
तुमहिँ जपत तुमहीँ बिसरावत । तुमहिँ चेताइ सरन लै आवत ४

दूसर कवन एक है सोई । जेहिँ काँ चाहौ भक्त सो होई ५
जगजीवन करि बिनय सुनावै । साहेब समरथ नहिं बिसरावै ६

( ८ )

आरति चरन कमल की करऊँ । निकट तेँ दाया करु नहिँ टरऊँ १
सदा पास मैँ रहौँ तुम्हारे । तुम महिं का नहिं रहहु बिसारे २
जानत रहहु जनावत सोई । तब बंदे तेँ बंदगी होई ॥३॥
बसि न काहु का कोऊ बिचारै । जेहि चाहै तेहि तस निस्तारै ४
जगजीवन कि बिनय सुनि लीजै । अपने जन काँ दरसन दीजै ५

---

## ॥ मंगल ॥

( १ )

नहिँ आवै नहिं जाइ भरोसा नाम को ॥टेक॥
ज्यौँ चकोर ससि निरखत सुधि तन नहिँ ताहि को ।
चरन सीस दै रहै भुगुतै फल काहि को ॥१॥
अपने मन माँ समुझि बूझि मैँ आहुं को ।
केहि घर तेँ जग आइ जाउँ मैँ काहि को ॥२॥
अमर मरै नहिं जिये फेरि घर जाइ को ।
निर्गुन केर पसार फंद भ्रम जार को ॥३॥
निर्मल मैल मैँ मिला रहै लय लाइ को ।
जगजीवन गुरु समरथ जानहि जन जाहि को ॥४॥

( २ )

बिनती करौँ कर जोरि के तुमहिं सुनावऊँ ।
दाया होय तुम्हारि तौ मंगल गावऊँ ॥१॥
देहु ज्ञान परकास तौ सत्त बिचारऊँ ।
निस दिन बिसरहुँ नाहि मैं सुरति सँभारऊँ ॥२॥

तुम सब जानत अहहु जनावत हौ सोई ।
काया नगर बनाइ किह्यो रचना सोई ॥ ३ ॥
तेहि काँ अंत न खोज न गति जानै कोऊ ।
नव खिरकी दरवाजा दसव बनायऊ ॥ ४ ॥
तेहि मंदिल सत पुरुष बिराजै नित सोई ।
नगर कै सुधि लेहि दुःख केहु नहि होई ॥ ५ ॥
सर्ब नगर बस्ती कहुँ खाली नाहीं ।
अपने रमहि सुभाउ सो आपुहि आही ॥ ६ ॥
तेहि मद्धे करि बास बिचार तेहि माहीं ।
भटक भरम मन बूझि अहै कछु नाहीं ॥७॥
बिप्र* बिस्वास तव आयो मंत्र बिचारेऊ ।
सुरति के पितु प्रीतम सो तिन्हहि पुकारेऊ ॥८॥
सुमति जो ऐसी आइ तबहि सुख पावई ।
निर्गुन सो है दूलह तिन्हहि बियाहई ॥९॥
सुमति सुरति को माइ बिचार्‍यो सोई ।
निरतो नेह लगाइ भाग तेहि होई ॥ १० ॥
नाऊ नाम लीन्ह लय लगन धरायऊ ।
नगर में गगन भवन सो तहँ काँ आयऊँ॥११॥
माड़ो माया बिस्तार तृन तीनि बनायऊँ ।
बाँस बास गुन गूंथ जहाँ तहँ लायऊँ ॥ १२ ॥
सहज सेहरा बनि पूरा ते सिर बाँधेऊँ ।
चौका चार बिचार राग अनुरागेऊँ ॥१३॥

---

* उत्तम या पवित्र जाति का मनुष्य ।

पाँच बजावहिँ गावहि नाचहिँ ओई ।
करहिँ पचीस सो निरत एक ह्वै सोई ॥१४॥

॥ छंद ॥

एक ह्वै कै करहिँ निर्तं तत्त तिलक चढ़ावहीं ।
पढ़हिँ अनहद सब्द सुमिरत अलख बरहि मनावहीं ॥१५॥
गाँठि जोरी पौढ़ि कै दृढ़ भंवरि सात फिरावहीं ।
मेटि दोहाग अनेक बिधि कै सोहाग रँग रस पावहीं ॥१६॥
सूति रहि सत सेज एकै निरखि रूप निहारऊँ ।
चमक मनि झलमलित रबि ससि ताहि छबि पर वारऊँ ॥१७॥
वारि डारौं सीस चरनन बिनय कै बर माँगऊँ ।
रहै सदा सँजोग तुम तेँ कबहुँ नाहीं त्यागऊँ ॥१८॥
लेउँ माँगी रहै लागी दरस नैनन चाखऊँ ।
आवागवन नेवार करिकै मन हितै करि भाखऊँ ॥१९॥
रहौं सरनं निकट निसु दिन कबहुँ नहिं भटकावहू ।
जगजीवन के सत्य साहिब तुमहिँ ब्रत निर्बाहहू ॥२०॥

( ३ )

अरे यहि जग आइके कहाँ गँवायो रे ।
निर्गुन तेँ फुटि आनि धर्‌यो गुन, वह घर मन बिसरायो रे ॥१॥
कर्म फाँसि माँ सुख भा, सुद्धि भुलायो रे ।
रचि पचि मिलि माँटी महँ, सबै गंवायो रे ॥२॥
बहुत लागि हित माया, मन बौरायो रे ।
भाई बंधु कबीला सबै, बिचार्‌यो रे ॥ ३ ॥
जब तजि चलत है काया, सँग न सिधारे रे ।
रोवत मोह बस माया, ह्वैगे न्यारे रे ॥ ४ ॥

जीवत कस नहिं त्यागहु, वृथा करि जानहु रे।
आपुनि सुरति सँभारि, नाम गहि आनहु रे ॥५॥
रहहु जगत की संगति, मन तेँ न्यारे रे।
पुहमी* पाँव उठावहु रहहु बिचारे रे।
काँट गड़ै नहिं पावै, रहहु सँभारे रे ॥६॥
काल तेँ कोइ नहिँ बाचहि, सब काँ खाइहि रे।
नाम सुकृत नहिं गहहि, अंत पछिताइहि रे ॥७॥
जस मोहिँ समुझि परतु है, तस गोहरावौँ रे।
सुनै बूझि मन समुझि, तौ पार उतारौ रे ॥८॥
अचरज आवत देखिकै रे, मन मन समुझि रहायो रे।
मैँ तौ कछु नहिं जान्यो, गुरू जनायो रे ॥९॥
रहौँ बैठि तहवाँ मैँ, सुरति निहारौँ रे।
चरन सदा आधार, सीस मैँ वारौँ रे ॥१०॥
जगजीवन के साँईँ, तुम सब जानहु रे।
दास आपना जानहु, अवर न आनहु रे ॥११॥

(४)

जागहु जागहु अवरन* कुंड, सब पापन के भाजहिं झुंड ॥१॥
जागे ब्रह्मा जागे इन्द्र, सहस कला जागे गोबिंद ॥२॥
जागे धरती जगे अकास, सिव जागे बैठे कैलास ॥३॥
तुम जागहु जागे सब कोइ, तीनि लोक उँजियारी होइ ॥४॥
जगजीवन सिष जागे सोइ, चरन सीस धरि रहे हैँ जोइ ॥५॥

॥ शब्द ५ ॥

यह मन राखहु चरनन पास। काहे काँ भरमत फिरहु उदास ॥१॥
जो यहु मनुवाँ अंतै जाय। राखि लेइ चरनन सिर नाय ॥२॥

---

* धरती।

जो यह मनुवाँ जानै आन । तुम्ह तजि करै न अनत पयान ॥३॥
धरती गगन तुम्हार बनाव । चरन सरन मन काँ समुझाव ॥४॥
दूजा अवर नहीं है कोय । जल थल महँ रहि जोति समोय ॥५॥
व्यापि रह्यो है सबहिन माहिं । अवर दूसरो जानहु नाहिं ॥६॥
न्यारे रहत हैं संतन माहिं । संत से न्यारे कबहूँ नाहिं ॥७॥
मोहिं का परत अहै अस जानि । निर्मल जोति न्यारि निर्बानि ॥८
जगजीवन काँ आस तुम्हारी । दाया करि कबहूँ न बिसारी ॥९

॥ शब्द ६ ॥

का तकसीर भई प्रभु मोरी । काहे टूटि जाति है डोरी ॥१॥
तब तुम साहिब अब तुम जोरी । नाहीं लागु अहै कछु मोरी ॥२॥
तुम्ह तें कहत अहौं कर जोरी । प्रीति गाँठि कबहूँ नहिं छोरी ॥३॥
नहिं बसि अहै गुलामन केरी । तुम्ह तें काह अहै बरजोरी ॥४॥
माथ चरन तर करौं न चोरी । करता तुम्हहीं मोहिं न खोरी ॥५॥
नैन निरखि छबि देखौं तोरी । आदि अन्त दृढ़ राखहु डोरी ॥६॥
जगजीवन काँ आसा तोरी । निर्मल जोति तकौं टक* जोरी ॥७॥

---

# ॥ सावन व हिँडोला ॥

(१)

जबतैं लगन लगी री, तब तैं कानि काह को सखी री ॥१॥
मैं प्यासी अपने पिय केरी, बिन पिय प्यास मिटै न सखी री २
कामिनि दुइ कर धर चरन पर, सीस नवाइ मनावै सखी री ॥३
पिय तौ गरू गँभीर कहावहिँ, जिय मैं दरद न आनैं सखी री ४

---

* दृष्टि ।

मान गुमान तजयो है सखी री, पिय के निकट बसी री सखी री ५
पिय का बदन निहारत सुख भा, अनत न चित्त धरयो है सखीरी ६
मधुकर पुहुप बास कहँ भेँटै, चाखत सुधि बिसरी री सखी री ७
जगजीवन साँइ की छबिहीँ, देखि कै मस्त भई री सखी री ८

( २ )

असाढ़ आस तजि दीन्हेउ, सावन सत्त बिचार।
भादौँ भरमहिँ त्यागेऊ, लियो तत्त निरुवार ॥१॥
कुँवार कर्म जो लिखि दियो, कातिक करनो होय।
अगहन अम्मर देखेऊ, जुग जुग जीवै सोइ ॥२॥
पूस परम सुख उपजेऊ, माघै माया त्यागि।
फागुन फंदा काटेऊ, तब जागयो बड़ भागि ॥३॥
चैत चरन चित दीन्हेऊ, बैसाखै बरन बिचार।
जेठ जीति घर आयेऊ, उतरयो भवजल पार ॥४॥
निर्गुन बारह मासा, संतन करहु बिचार।
जगजीवन जो बूझही, त्यागहि माया जार ॥५॥

( ३ )

पपिहै जाय पुकारेऊ, पंछिन आगे रोय।
तीनि लोक फिरि आयेऊँ, बिनु दुख देखयो न कोय ॥१॥
जोगिन है जग ढूँढ़ेऊँ, पहिरयौँ कुंडल कान।
पिय का अंत न पायेऊँ, खोजत जनम सिरान ॥२॥
बैठि मैँ रहेऊँ पिया सँग, नैनन सुरति निहारि।
चाँद सुरंज दोउ देखेउँ, नाहिँ उनकी अनुहारि* ॥३॥

---

* बराबर।

माया रच्यो हिंडोलना, सब कोइ झूल्यो आय ।
पैंग मार वहि घर गयो, काहू अंत न पाय ॥४॥
बिस्नु औ ब्रह्मा झूलेऊ, झूल्यो आइ महेस ।
मुनि जन इंदर झूलि सब, झूले गौरि गनेस ॥५॥
सतगुरु तस खंभन गगन, सूरति डोरि लगाय ।
उतरै गिरै न टूटई, झूलहि पैंग बढ़ाय ॥६॥
जगजीवन कहि भाखही, संतन समझहु ज्ञान ।
गगन लगन लै लावहू, निरखहु छबि निर्बान ॥७॥
माया बहुत अपर्बल, अलख तुम्हार बनाउ ।
जगजीवन बिनती करै, बहुरि न फेरि भुलाउ ॥ ८ ॥

## ॥ बसंत ॥

॥ शब्द १ ॥

मोरे सतगुरु खेलत यह बसंत,
जा की महिमा गावत साध संत ॥ टेक ॥
कोइ जल माँ रहिगे रैनि गँवाय,
कोइ महि प्रदच्छिना दहिनि लाय ।
कोइ गृह तजि बन माँ किये बास,
विना नाम सब खूसखास* ॥ १ ॥
कोइ पंच अगिन तपि तन दहाय,
कोइ उर्ध बाहु कर रहे उठाय ।
कोइ निराधार रहि पवन आस,
विना नाम सब खूसखास ॥ २ ॥

* घास फूस ।

कोइ दूधाधारी पर घर चित्त,
नग्न रहै कोइ लकड़ी नित्त ।
कोइ पावक सूरति करि निवास,
बिना नाम सब खूसखास ॥ ३ ॥
कोइ एक आसन कबहूँ न डोल,
कोइ मवनी ह्वै कबहूँ न बोल ।
कोइ गगन गुफा महँ लिये बास,
बिना नाम सब खूसखास ॥ ४ ॥
कोइ निसु दिन रहिगे भूला भूल,
कोइ स्वाँस बंद करि पकरि मूल ।
जगजीवन एक नाम अधार,
नाम नाव चढ़ उतरे पार ॥ ५ ॥

॥ २ ॥

खेलहु बसंत मन यहि बन माहिँ,
अमृत नाम बिसारहु नाहिँ ॥ १ ॥
यहि बन का नहिँ वार पार ।
आइ के भूलि परा संसार ॥ २ ॥
जिन्ह जिन्ह आइ धरी है देँह ।
दीन्हेव तजि तिन्हहीँ सनेह ॥ ३ ॥
वह सुधि डारिन्ह मन बिसराय ।
मैँ तैँ यह रस बहुत हिताय ॥ ४ ॥
ता तेँ टूटि गई वह डोरि ।
पड़े भवजाल झकोरि झकोरि ॥ ५ ॥
अब मन लीजै तत्त विचारि ।
गहि रहिये मन नाहिँ विसारि ॥ ६ ।

रसना रटना रहहु लगाय ।
  प्रभु समरथ लेहैँ अपनाय ॥ ७ ॥
जगजिवनदास मधुर रस चाखि,
  जग्त न कहौँ सन्त मत भाखि ॥ ८ ॥

॥ ३ ॥

साधो मन महँ करहु बिचार ।
  दुइ अच्छर भजि उतरहु पार ॥ १ ॥
पूजा अरचा त्यागि तुम देहु ॥
  कर मेँ माला कबहुँ न लेहु ॥ २ ॥
जिभ्या चलै न कहहु पुकारि ।
  अस रहि अंतर डोरि सँभारि ॥ ३ ॥
काया भीतर मन लै आउ ।
  तीरथ ब्रत कहँ नाहीँ धाउ ॥ ४ ॥
दान औ पुन्न जग्य महँ नाहिँ ।
  सहजहि नाम भजहु मन माहिँ ॥ ५ ॥
दुइ अच्छर समान नहि कोय ।
  वेद पुरान संत कहैँ सोय ॥ ६ ॥
मूल मंत्र यहै सत आहि ।
  यहि तजि सो भूलहि भव माहिँ ॥ ७ ॥
ज्ञान सब्द तेँ कहौँ पुकारि ।
  साधो सुनि मन गहहु विचारि ॥ ८ ॥
जगजीवन सहजहि सब मानु ।
  सूरति गहि कर अंतर आनु ॥ ९ ॥

॥ ४ ॥

खेलहु मनुवाँ तुम नाम साथ। हित आपन करिहै सनाथ ॥१॥
यहि काया भीतर रहि गाव। बाहर इत उत कहूँ न धाव २
कहि मन परगट देउ लखाव। जग आये का इहै बनाव ॥३॥
तीरथ ब्रत तप नेम अचार। उत्तम सहज राखु बेवहार ॥४॥
सब आसा चित देवहु त्यागि। एक टेक करि रहहु लागि॥५॥
सोवत जागत बिसरै नाहि। रमत भ्रमत रहु नामहिं माहिं ६
मिलि कै निर्मल होहु निहंग। सुमति सुमन सतगुरु परसंग ७
अम्मर अजर तबै तुमु होहु। जो यहु मंत्र तत्त गहि लेहु ८
जगजिवनदास रहु चरन लागि। यह बर सरन लेहु सत माँगि ९

॥ ५ ॥

साधो खेलहु समुझि बिचार।
अंतर डोरि गहि रहहु सम्हारि ॥ १ ॥
लोक आइ सब खेल्यो खेल।
मिलि आसा नहिं भयो अकेल ॥ २ ॥
हित करि जगत कि रह्यो लोभाय।
मति पाछिल सब गई हिराय ॥ ३ ॥
फूटि निर्गुन गुन धारिन्ह आनि।
पर्‍यो मोह मिटि कौल कानि ॥ ४ ॥
लागि और कछु और कमाय।
बीते समय चले पछिताय ॥ ५ ॥
मुनि सुरपति नाचि बहु भाँति।
नर बपुरे की काह बिसाति ॥ ६ ॥

दैँही धरि धरि नाच्यो राम ।
भक्तन केर सँवाख्यो काम ॥ ७ ॥
थिर नहिँ कोउ आवत सो जात ।
सुख भा सुधि गै कुबुधि तिरात ॥ ८ ॥
मन मद माती फिरहि बेहाल ।
अंत भयो धरि खायो काल ॥ ९ ॥
तत्त ज्ञान मन करहु बिचार ।
सुकृत नाम भजु होइ उबार ॥ १० ॥
यह उपदेस देत हैाँ सोय ।
दैँह धरे कछु दुक्ख न होय ॥ ११ ॥
बेद ग्रंथ ज्ञान लियो छानि ।
चेत सचेत है लीजै जानि ॥ १२ ॥
जगजीवन कहै परघट ज्ञान ।
उलटि पवन गहि धरि रहु ध्यान ॥ १३ ॥

॥ ६ ॥

नैहर सुख परि नाहिँ भुलाहु ।
मनहिँ बूझि सखि पियहिँ डेराहु ॥ १ ॥
माइ तुम्हारि बहुत सुख खानि ।
इन्ह के गुमान जनि रहहु भुलानि ॥ २ ॥
यहि तुम्ह तेँ पूँछिहिँ नहिँ बात ।
ससुरे चलिहहु मन पछितात ॥ ३ ॥
पितु औ पाँचैा भाइ पियार ।
भैाजी सोउ अहै हितकार ॥ ४ ॥

इन्ह तें कबहु न राखेहु रीति।
सब तजि करि रहु पिय तें प्रीति ॥ ५ ॥
सखि पचीस सँग फिरहु उदास।
एइ तुम्हारि करिहैं उपहास ॥ ६ ॥
इन्ह के मते चले दुख होय।
कहौं सिखाइ मानि ले सोय ॥ ७ ॥
सासु कहै बहु कैसी आहि।
ससुर कहै यहु समुझै नाहिं ॥ ८ ॥
ननद देखि कै रहहि रिसाय।
तब चलिहहु कर मलि पछिताय ॥ ९ ॥
अब तुम इहै सिखावन लेहु।
सुमति सो आनि कुमति तजि देहु ॥ १० ॥
जनम धरे का याहै लाह।
ह्वै सुचित्त रहु चरनन माँह ॥११॥
जो मन बाहर जाइहि धाय।
बिनु जल गहिरे बूड़हि जाय ॥१२॥
परि भवजाल माँ करहि बिगार।
मनहिं मारि कै जनम सँवार ॥ १३ ॥
मन यहु साँच झूठ है सोय।
मन का भेद न पावै कोय ॥ १४ ॥
मन के सुख तन का सुख होय।
तन छीजे सुख मनहिं न कोय ॥ १५ ॥
मन यहु खात अहै जल पीवै।
मन यह जुग जुग अम्मर जीवै ॥ १६ ॥

( २ )

खेलु मगन ह्वै होरी, औसर भल पाये ।
साँईं समरथ तोहिं फरमाया, तब यहि जग माँ आये ॥१॥
बिंदम बुंद बनाइ कै जामा, दीन्ह्यो तोहिं पहिराये ।
सिरिजि कियो दस मास सुद्ध तोहिं, जरत से लीन्ह बचाये॥२॥
बाहर जब तैं भयसि, माइ तब दूध पियाये ।
बाल बुद्ध तब रह्यो, जानि कछु नाहीं पाये ॥३॥
तरुन भयो मद मस्त, कर्म तब बहुत कमाये ।
काम क्रोध लोभ मद तृस्ना, माया में लौ लाये ॥४॥
मैं तैं मद परपँच, ताहि तें ज्ञान गंवाये ।
साध सँगति नहिं किये, ज्ञान कछु नाहीं पाये ॥५॥
गह्यो पचीस तरंग, तीनि तजि चौथे धाये ।
देखि तखत पर पुरुष, ताहि काँ सीस नवाये ॥६॥
फगुआ दरसन माँगि पागि, अंतर धुनि लाये ।
जगजीवन जुग बंध, जुगन जुग ना बिलगाये ॥७॥

( ३ )

कौनि विधि खेलौं होरी, यहि बन माँ भुलानी ॥ टेक ॥
जोगिन ह्वै अंग भसम चढ़ायो, तनहिं खाक करि मानी ।
ढुंढ़त ढुंढ़त मैं थकित भई हौं, पिया पीर नहिं जानी ॥१॥
औगुन सब गुन एकौ नाहीं, माँगत ना मैं जानी ।
जगजीवन सखि सुखित होहु तुम, चरनन में लपटानी ॥२॥

( ४ )

साधो खेलहु फाग, औसर तौ इहै अहै ।
लेहु सँभारि सँवारि कै, तबहिं तौ सुख लहिहै ॥१॥

काया कनक कै नगर बनायो, बहुरि नहीं फिरि बनिहै ।
अब का ख्याल हाल लै लावौ, अमर है जुग जुग जीहै ॥२॥
जे जे आनि जानि जग जागे, से से पार निबहि हैं ।
अहैं अचेत चेत नहिं दुनियहिं, ते भवजलहिं समैहैं ॥३॥
तजि कै तीनि चौथे महँ पहुँचे, आसन दृढ़ करि रहिहैं ।
जगजीवन सतगुरु संगी भे, वै नहिं न्यारे बहिहैं ॥४॥

( ५ )

मनुआँ खेलहु फाग बचाय ।
डारत फाँसि हाँसि नहिं आवत, देत आहै भरमाय ॥१॥
पाँच लिहे लै लासी कर तैं, मारत आहै धाय ।
तिन की चोट खौंटई लागत, गैल चला नहिं जाय ॥२॥
नारि पचीसौ रमत अहैं सँग, लेत अहैं ललचाय ।
ते सब थाँभि बाँधि रस हीं तैं, गगन गुफा चढ़ि जाय ॥३॥
निरगुन निरमल साहेब बैठे, निरखि रहै टक लाय ।
जगजीवन तहँ माँगि पागि रस, चरन रहै लपटाय ॥४॥

( ६ )

पिय सँग खेलौ री होरी ।
हम तुम हिल मिलि करि एक-सँग ह्वै, चलैं गगन की ओरी॥१॥
पाँच पचीस एक कै राखौ, लै प्रमोधि एक डोरी ।
चली भली बनि आई तहवाँ, पिय तें रहि कर जोरी ॥२॥
निरति निबाह होइहै तबहीं, आपु जानि हैं चेरी ।
सूरति सुरति मिलाय रहो तहँ, भींजि सतहिं रस घोरी ॥३॥
तजि गुमान मान बहु विधि तें, मैं तैं डारी तोरी ।
सुख ह्वैहै दुख मिटिहै तबहीं, नैनन तकि मुख मोरी ॥४॥

सिखर महल में बैठि मगन है, और जानि सब थोरी ।
जगजीवन जुग बांधि जुगन जुग, प्रीति गाँठि नहिं छोरी ॥५॥

( ७ )

सखी री खेलहु प्रीति लगाय ।
है सुचित्त चित्त काँ थिर करि, दीजै सब बिसराय ॥१॥
बैरी बहुत बसत यहि नगरी, डारत अहैं नसाय ।
ऐसी जुगुति बाँधि कै रहिये, करि बस पाँचौ भाय ॥२॥
लेहु बोलाय पचीसौ बहिनी, रहहिं नाहिं बिलगाय ।
तब लै लाय चलो मंडफ काँ, पिय तेँ मिलिये जाय ॥३॥
गगन मँडफ तहँ नीक सोहावन, देखत बहुत हिताय ।
तहँ सत सेज बैठि रहु सुख तेँ, जोतिहिं जोति मिलाय ॥४॥
निरखहु जोति रूप वह निर्मल, अनतै दृष्टि न जाय ।
जगजिवनदास भाग तब जागे, नैन दरस रस पाय ॥५॥

( ८ )

यहि नगरी में होरी खेलौँ री ।
हम तेँ पियो तेँ भेँट करावो, तुम्हरे सँग मिलि दौरौँ री ॥१॥
नाचौँ नाच खोलि परदा मैँ, अनत न पीव हँसौँ री ।
पीव जीव एकै करि राखौँ, सो छवि देखि रसौँ री ॥२॥
कतहुँ न वहौँ रहौँ चरनन ढिग, यहि मन दृढ़ होय कसौँ री ।
रहौँ निहारत पलक न लावौँ, सर्वस और तजौँ री ॥३॥
सदा सोहाग भाग मोरे जागे, सतसँग सुरति बसौँ री ।
जगजीवन सखि सुखित जुगन जुग, चरनन सुरति धरौँ री ॥४॥

( ९ )

साधो होरी खेलत बनि आई ।
अजय गावँ यह काया आहै, ता मैँ धूम मचाई ॥१॥

खेलहिँ पाँच अपने अपने रस, तेहि काँ तस समुझाई ।
लिहे पचीस सहेली साथहिँ, बाहर नहिँ बिलगाई ॥२॥
लियो लगाय रसाय डोरि तेँ, तीनि तजि चौथे धाई ।
सतगुरु साहेब तहाँ बिराजैँ, भेँट कीन्ह तेहिँ जाई ॥३॥
जगे भाग तब बड़े हमारे, लीन्ह्यो माँगि रिझाई ।
जगजीवन गुरु चरनन लागे, भल प्रसंग बनि आई ॥१॥

( १० )

मनुआँ खेलहु ख्याल मचाई ।
अजब तमासे अहैँ नगर मेँ, देखि न परहु भुलाई ॥१॥
यहि नगरी का तीर थाह नहिँ, अंत न केहू पाई ।
ठग औ डाइन बसत ताहि मेँ, तिन हीँ की प्रभुताई ॥
सोरह सहस जहँ उठैँ तरंगैँ, पाँच पचीस मग धाई ।
तिन्ह जो जीतै चढ़ै गगन कहँ, तब ह्वै थिर ठहराई ॥३॥
ताहि के संग रंग रस माते, सबै एक रस आई ।
जगजीवन निरगुन गुन मूरति, रहिये सुरति मिलाई ॥४॥

( ११ )

रहु मन चरनन लाय, खेलौ होरी ।
अवसर इहै बहुरि नहिँ पैहौ, दिह्यो न काहू खोरी* ॥१॥
आये बहुत परे बंधन माँ, सक्यो न फंदा तोरी ।
ऐँचा खैँचा भै सबहिन कै, परिगे झकझोरी ॥२॥
बचे न कोऊ आय जगत महँ, लिये खाय बिष घोरी ।
लियो बचाय आय सरनागति, पियो अमीरस तोरी† ॥३
धागा पाँच पचीस लिये सँग, करहिँ रात दिन सोरी ।
इन तेँ खबरदार ह्वै रहिये, बाँधि लेहु इक डोरी ॥४॥

---

*दोष । †घूंट ।

मैं मरि* जीवत रहहु मरहु नाहिं, तैं काँ डारहु तोरी।
चढ़हु पढ़हु सतसंग बास करि, गुरु तें रहहु कर जोरी ॥५॥
निर्मल जोति निहारत रहिये, बहुरि होय नहिं फेरी।
जगजीवन जग आस तजे रहु, यहि बिधि खेलहु होरी ॥६॥

( १२ )

काया सहर कहर, कैसे खेलौं होरी।
अंत न पावौं भेद, अहै केतिक मति मोरी ॥१॥
मैं तौ परिउँ भुलाय, टूटि गै डोरी।
करौं अब कौनि उपाय, तजिन सुधि मोरी ॥२॥
माया परि जंजाल, कैसे अब छोरी।
आय कौल करि सुद्धि हरी, मैं कीन्ह्यो चोरी ॥३॥
उनके नाहीं लागु, अहै सब हमरी खोरी।
झूठ भरम परि कर्म, औगुन बहु कीन्ह्यो को री ॥४॥
आयो रहि निर्बान, यहाँ बिष अमृत घोरी।
अरे मन मुगुधा† समुझि, सब जानहु थोरी ॥५॥
यहँ तें उलटि लगाय, डारि दे जग तें तोरी।
कोऊ रहन न पाइ है, लै जैहै बरजोरी ॥६॥
सबै खाक ह्वै जाइ हैं, साँवरि औ गोरी।
मैं तैं पाँच पचीस, बाना‡ ते सब काँ छोरी ॥७॥
जगजीवन चढ़ि गगन, लाउ लै पोढ़ी।
चरनन सीस राखि, पाछे नहिं हेरी§ ॥८॥

( १३ )

मनुआँ फाग खेलु पहिचानो ॥ टेक ॥
वेद पुरान ग्रन्थ ते सब तें, लीन्ह्यो सारहिं छानी।
सो लै गहहु बहहु नहि काहूँ, मन बिस्वास करि आनो ॥१॥

---

* "मैं" को मार कर। † मूढ़। ‡ भेष, वस्त्र। § देखो।

सिव ब्रह्मा औ बिस्नु हित लागे, मानि लेहु परमानी ।
अस रस पाइ कै भींज मस्त भे, तिन हीं कह्यो बखानो ॥२॥
मंडफ अजब रात दिन नाहीं, एक जोति निर्बानी ।
तेहिं कै दिप्त महा उँजियारी, सब महँ जोति समानी ॥३॥
लेहु माँगि दीन ह्वै बहु बिधि, दाता सतगुरु दानी ।
जगजीवन दै सीस चरन तर, अचल अमर ठहरानी ॥४॥

( १४ )

यहि जग होरी, अरी मोहिं तें खेलि न जाई ।
साँईं मोहिं बिसराय दियो है, तब तें पर्यौं भुलाई ॥१॥
सुख परि सुद्धि गई हरि मोरी, चित्त चेत नहिं आई ।
अनहित हित करि जानि बिषै महँ, रह्यो ताहि लपटाई ॥२॥
यहि साँचे महँ पाँचौ नाचैं, अपनि अपनि प्रभुताई ।
मैं का करौं मोर बस नाहीं, राखत हैं अरुझाई ॥३॥
गगन मँदिल चलि थिर ह्वै रहिये, तकि छबि छकि निरथाई ।
जगजीवन सखि साँईं समरथ, लेहैं सबै बनाई ॥४॥

( १५ )

औसर बहुरि न पैहौ मनुआँ, खेलहु नगरी फाग ।
काया कनक अनूप बनी है, सुकृत नाम अनुराग ॥१॥
सात दीप नौ खंड पिर्थवी, सात समुद्र समाग ।
ताहिं भीतर तीरथ अनेक हैं, सोवत कस नहिं जाग ॥२॥
तजि दे पाँच पचीस औ तीनिउ, चौथे के पथ* लाग ।
दरस देख तहँ जाय पुरुष का, निरखि नीर रस पाग ॥३॥
झलकत रूप अनूप तहँ निर्मल, गहु ऐसो बैराग ।
ब्रह्मा बिस्नु सिव का मन तेहि माँ, सो गुरु जान सत भाग ॥४॥

---

* पंथ, राह ।

( २१ )

अरी ए मैं तो बैरागिन, होरी कैसे खेलौं री ॥ टेक ॥
ढूँढ़त फिरौं कहुँ अंत न पावौं, कैसे कै धीर धरौं री ॥१॥
समुझि बूझि पछिताय रहिउँ मैं, का सौं भेद कहौं री ॥२॥
आपु चढ़े सिरसंग अटरिया, अब मैं धाइ चढ़ौं री ॥३॥
जगजीवन ऐसे साँईं के, चरनन सीस धरौं री ॥४॥

( २२ )

कैसे फाग खेलौं यहि नगरी ।
काया नगर के अंत खोज नहिं, भटकत भ्रमत फिरौं री ॥१॥
नगरी नौ खिरकी फिरकी नहिं, धुआँधार बरसौ री ।
तेहि की छाँह फिरौं बौरानी, मोहिं न सूझि परौ री ॥२॥
फिरत पाँच वै दंडी बैरी, कल न करैं सकुचौं री ।
निसु बासर मोरे पिंड पड़तु हैं, गई सुधि सब बिसरी री ॥३॥
तिन्ह की नारि रमहिं पचीस सँग, अचलनि बहुत करहिं री ।
समुझाये समुझत कछु नाहीं, सबै बिगार करहिं री ॥४॥
सोरह सै तहँ फिरैं फिरंगिनि, कूप चौरासी गुन गहिरो री ।
तेहि करार बसि और बलावहिं, तीनिउ लोक ठगी री ॥५॥
मैं मतंग तैं तोरि मिताई, हम तुम समत करी री ।
होइ एक मिलि चलिये वहँ जहँ, सत पिउ संग बरो री ॥६॥
सब लै त्यागि पयान गगन तकि, जहँ रबि ससि दिप्त हरी री ।
जगजीवन सखि हिलि मिलि करि कै, सूरति छबिहिं
गही री ॥७॥

( २३ )

दुनियाँ जग धंध बँधा इक डोरी ।
कौनिउ नाहिं उपाय, सकै कोइ नाहीं छोरी ॥१॥

सत्त सुकृत बहु नाम, रहै गहि अंतर चोरी ।
याहै अहै उपाय, लीन्ह तिन आपुहिं छोरी ॥२॥
सबै आपुनी लागु, देइ को केहि काँ खोरी ।
अमृत रसना तजे, खाइ रहि बिष माँ घोरी ॥३॥
ताहि तेँ सूझत नाहिँ, बुद्धि भै तेहि तेँ थोरी ।
मैँ तेँ गर्ब गुमान, जात सो नाहीं तोरी ॥४॥
अंत गये बिनसाय, भये हैँ खाक कि ढेरी ।
अंत चले पछिताय, केहू नहिँ काहु बहोरी ॥५॥
काल तेँ सो बचि रह्यो, जो गुरु तेँ रहि कर जोरी ।
जगजीवन गहि चरन, करो निजु सूरत पोढ़ी ॥६॥

( २४ )

अरी ए नैहर डर लागै, सखी री कैसे खेलौँ मैँ होरी ।
औगुन बहुत नाहिँ गुन एकौ, कैसे गहौँ दृढ़ डोरी ॥१॥
केहिँ काँ दोस मैँ देउँ सखी री, सबै आपनी खोरी ।
मैँ तौ सुमारग चला चहत हौँ, मैँ तैँ बिष माँ घोरी ॥२॥
सदा पाँच परिपंच मेँ डारत, इन मेँ बस नहिँ मोरी ।
नाहिँ पचीस एक सँग आवत, धरत मोहिँ कहि मोरी ॥३॥
समत होहि तब चढ़ौँ गगन गढ़, पिय तेँ मिलौँ कर जोरी ।
भीजौँ नैनन चाखि दरस रस, प्रीति गाँठि नहिँ छोरी ॥४॥
रहौँ सीस दै सदा चरन तर, होउँ ताहि की चेरी ।
जगजीवन सत सेज सूति रहि, और बात सब थोरी ॥५॥

# मिश्रित अंग

॥ शब्द १ ॥

यहि नगरी महँ आनि हिरानी ॥टेक॥
गली गली महँ चलत फिरत रहि, अंत नहीं मैं जानी ।
जब मैं आइउँ कोउ सँग साथ न, इहवाँ भइउँ बिरानी ॥१॥
सोई समुझि जन्म पाइ जग, मूल बस्तु नहिं जानी ।
बड़े भाग तैं पाइ देँह नर, सुधि गै भूलि परिउँ भव आनी २
देखत खात पियत गाफिल मन, सुख आनंद बहुत हरषानी ।
डोलत बोलत चलत अपथ पथ, भरे मद अंघ गुमानी ॥३॥
मैं तैं मारि सँभारि न आवै, अघ कर्म हित करि बहुत कमानी ।
तेहि परि हरिगे सुधि बुधि सब कर, पग थाके जब फिर पछितानी ॥४॥
साधो साध सुरति दृढ़ करिये, रहि रसि बसि छबि अंतर जानी ।
जगजीवन ते जग तैं न्यारे, गुरु के चरन तजि और न जानी ॥५

॥ शब्द २ ॥

सुनु बिनु कृपा भक्त न होइ ।
नाहीं अहै काहु के बस में, चहै मन महँ कोइ ॥१॥
तिरथ ब्रत तप दान पुन्नं, होम जज्ञं सोइ ।
बैठि आसन मारि जंगल, तेहु भक्त न होइ ॥ २ ॥
ज्ञान कथि कबि पढ़े पंडित, डारि तन मन खोइ ।
नहीं अजपा जाप अंतर, भरम भूले रोइ ॥३॥
दियो दुइ अच्छर भइ दाया, गहा दृढ़ मत टोइ ।
जगजिवन बिस्वास बस जन, चरन रहे समोइ ॥४॥

॥ शब्द ३ ॥

आय कै झगरा लायो रे ॥ टेक ॥
जहँ तें चलि एहि जग कहँ आयो, वह सुधि मन तें
त्याग्यो रे ॥ १ ॥
सतगुरु साहेब कान लागि मोरे, मैं सोवत उठि जाग्यो रे ॥२॥
भयौं सचेत हेत हित लाग्यो, सत दरसन रस पाग्यो रे ॥३॥
जगजीवन बर नाम पाइ कै, चरन कमल अनुराग्यो रे ॥४॥

॥ शब्द ४ ॥

चरनन तर दियो माथ, करिये अब मोहिं सनाथ,
दास करिकै जानी ।
बूड़ा सब जगत सार, सूझै नहिं वार पार,
देखि नैनन बूझिय हित आनी ॥
सुमति मोहिं काँ देउ सिखाय, आनि मैल रहि लोभाय,
बुद्धि हीन भजन हीन, सुद्धि नाहिं आनी ।
सहस फन तें सेस गावै, संकर तेहिं ध्यान लावै,
ब्रह्मा बेद प्रगट कहै बानी ॥
कहौं का कहि जात नाहिं, जोती वा सर्ब माहिं,
जगजीवन दरस चहै, दीजै बरदानी ।

॥ शब्द ५ ॥

कहाँ गयो मुरली को बजैया, कहाँ गयो रे ॥ टेक ॥
एक समय जब मुरली बजायो, सब सुनि मोहि रह्यो रे ।
जिन के भाग भये पूर्बज* के, ते वहि संग रह्यो रे ॥१॥

* पूर्व जन्म ।

खबरि न कोई केहु की पाई, को धौं कहाँ गयो रे।
ऐसे करता हरता येहि जग, तेऊ थिर न रह्यो रे ॥२॥
रे नर बौरे तैं कितान है, केहिं गनती माँ है रे।
जगजीवनदास गुमान करहु नहिं, सत्त नाम गहि रहु रे ॥३॥

॥ शब्द ६ ॥

तुम तें कहत अहैं सुनाय।
चरन परि कै करौं बिनती, लेहु प्रभु जी बनाय ॥१॥
भान गन ससि तीनि चारिउ, लिये छिनहिं बनाय।
आनि इच्छा भई ऐसी, बिलँब नाहीं लाय ॥२॥
महा अपरबल अहै माया, दियो सब छिटकाय।
जहाँ जैसी तहाँ तैसी, दियो धंधे लाय ॥३॥
पाय रस तस रंग राते, लागि कर्म कमाय।
ताहि के बस कर्म परि कै, मिले तेहि माँ जाय ॥४॥
डारि दीन्ह्यो जक्त फाँसी, खैंचि नाच नचाय।
विना सतगुरु पार नाहीं, फेरि फिरि डहकाय* ॥५॥
लियो लाइ लगाय चित्तहिं, मंत्र दीन्ह सिखाय।
नाम गहि रहे जक्त न्यारे, भक्त सोइ कहाय ॥६॥
साधु ऐसे अहैं जग यहि, काहु नहि गति पाय।
जगजीवन वै अमरगढ़ में, वैठि थिर है जायँ ॥७॥

॥ शब्द ७ ॥

साधो नाम भजहु मन माहि।
दुइ अच्छर रसना रट लावहु, परगट भाखहु नाहिं ॥१॥

---

* धोखा खाना।

करि कै जुक्ति रहहु जग न्यारे, रहि के जक्तहिं माहि ।
जैसे जल महँ रहै जल-कुकुरी*, पंख लिप्त जल नाहिं ॥२॥
भव का सागर कठिन है साधो, तीर थाह कछु नाहिं ।
सुगति नावँ† के बेड़ा‡ चढ़ि कै, तेई पार तरि जाहिं ॥३॥
गुप्त प्रगट सत अंतर आहै, समुझहु आपुहि माहिं ।
जगजीवन गुरु मूरत निरखहु, सीस चरन तेहिं माहिं ॥४

॥ शब्द ८ ॥

साधो नाम बिसरि नहिं जाई ।
सोवत जागत बैठे ठाढ़े, अंतर गुप्त छपाई ॥ १ ॥
सेस सहस मुख नामहिं बरनत, संकर तेउ लव लाई ।
ब्रह्मा चारिउ बेद बखानत, नामहिं की प्रभुताई ॥ २ ॥
नेगन§ पतित तरे यहि नाम तें, सकै कौन गति गाई ।
तीरथ बरत तपस्या करि कै, बड़े भाग जिन्ह पाई ॥ ३
नामहिं गहहु रहहु दुनिया में, गहे रहहु दिनताई ।
जगजीवन जग जनम देह धरि, होइहि तबहि बड़ाई ॥

॥ शब्द ९ ॥

मन तन काँ खाक जानु, चित्त रहु लगाई ॥ टेक ॥
निर्गुन तें फूटि छूटि, टूटि नाहिं जाई ।
सुधि सँभारि उलटि निरखि, छोड़ि देहु गफिलाई ॥ १
पुरइन पात नीर जैसे, रहु ऐसे ठहराई ।
बास जक्त रहि निरास, निरखहु निरथाई ॥ २ ॥
कंज बास बिगसित मधुकर, मनि जोति मिली आई ।
संपुट करि बाँधि प्रीति, उड़न नाहिं पाई ॥ ३ ॥

---

* मुरगाबी । † नाम । ‡ किस्ती । § अनेक ।

ऐसो यह जुक्ति भक्त, जक्त माँ रहाई ।
जगजीवन बिस्वास करि कै, चरन गुरु लपटाई ॥ ४ ॥

॥ शब्द १० ॥

मनुआँ तैं कहुँ अनत न जाई ।
गगन गुफा सतगुरु कै मूरति, तहाँ रहौ लौ लाई ॥ १ ॥
है माया बिस्तार ताहि का, अंत न काहू पाई ।
वहि घर तें निरमल चलि आयो, इहवाँ गयो भुलाई ॥२॥
कोई तपसया दान पुन्न करै, कोइ कोइ तिरथ नहाई ।
कोई पखान बखान करत रहै, याही गये भुलाई ॥३॥
नाम नाहिं अंतर महँ चीन्है, बहुत कहै बकताई ।
जगजीवन निरमल मूरत तें, रहौ एक टक लाई ॥४॥

॥ शब्द ११ ॥

अब मन बैठि रहु चौगान ।
महा अपरबल अहै माया, अनत करु न पयान ॥ १ ॥
गये बाहर जाहुगे बहि, भूलि है बहु ज्ञान ।
मंत्र मत कहि देत आहैं, मानि ले परमान ॥२॥
पवन पानी नाहिं तहवाँ, नाहिं ससि तन भान ।
नाहिं सुधि बुधि सुःख दुःखं, सत्त दिष्टि निसान ॥३॥
निरखु निरमल लाइ इक टक, निर्गुनं निर्बान ।
जगजिवन गुरु बाँधि रहु जुग, (तहँ) चरन हीं लपटान ॥४॥

॥ शब्द १२ ॥

साधो को मूरख समुझावै ।
सूकर स्वान वृषभ* खर की बुधि, सोई वहि काँ आवै ॥१॥

---

* बैल, साँड़ ।

बहु बकवाद बिबाद करहिँ हठ, करहिं जो मन माँ भावै ।
बेद गरंथ अनत कहँ निंदत, औरहिं ज्ञान सिखावै ॥ २ ॥
बहु अहंकार क्रोध छिम नाहीं, नाहक जीव सतावै
इतने पाप परै दुख तिन कहँ, सुख नहिं कबहूँ पावै ॥३॥
परैं अघोर नर्क ते प्रानी, नाम न सुपनेहुँ आवै ।
जगजीवन जे जे ऐसे हहिं, बिरथा जन्म गँवावै ॥४॥

॥ शब्द १३ ॥

मूरख बड़ा कहावै ज्ञानी ।
सब्द संत का मानै नाहीं, अपने मन की ठानी ॥१॥
भक्त काँ देखि चलहि सूमारग, भजन नाहिँ मन आनी ।
कहहि कि हम समान नहिँ कोई, बूड़े ते अभिमानी ॥ २ ॥
कबहुँ के चुटकी देहि भिखारी, कहहि कि हम बड़ दानी ।
हम जोगी हम ध्यानी आहैं, हम हन आगम-जानी ॥३॥
ऐसे बहुतक आहहिँ एहि जग, परहिँ नरक ते प्रानी ।
जगजीवन वै न्यारे सब तैं, सूरति मुरति समानी ॥४॥

॥ शब्द १४ ॥

कलि को देखि परखि मैं जानी ।
मातु पिता काँ दे दुख बहु बिधि, कछु मन दरद न आनी ॥१॥
देखा नैनन सो कहि भाषौं, लिया बिबेक करि छानी ।
सुत परबीन कहावंत बहुतै, पितहिँ कहै अज्ञानी ॥२॥
पकड़ि टाँग घिसियावहिं मारहिँ, तजहिँ धरम की कानी ।
जीवत जैसे धरत हैं हाड़ा, मुए देत हैं पानी ॥३॥
रहे इक भक्ति अचार बिचारे, पंडित बचन प्रमानी ।
देहिँ पिंड बहु प्रीति भाव करि, अस सरा धनहिँ मानी ॥४॥

बिप्रन कहँ पकवान खवावहिं, भात बरा तिथि मानी।
आजा बाप कै नाम पुकारहिं, खाइ के पेट अघानी ॥५॥
बहुतन के जग ऐसे पच्छन*, होवै जेहिं जस ठानी।
पड़े अघोर नर्क माँ सोई, जिन अस कीन्हो प्रानी ॥६॥
त्यागै कुमति सुमति मन गहि रहि, बोल सदा सुभ बानी।
जगजीवन तेहिं हित प्रभु मानत, कबहुँ न अंतर आनी ॥७॥

॥ शब्द १५ ॥

साधो नहिं कोइ भरम भुलाई।
कहे देत हौं प्रगट पुकारे, राखौं नाहिं छिपाई ॥१॥
नाम अच्छर दुइ तत्त सार है, भजै सोई चित लाई।
यहि सम मंत्र और है नाहीं, देख्यो ज्ञान थहाई ॥ २ ॥
रटै सो अंतर गुप्त रहै जग, काहु न देइ जनाई।
अपने भाय सुभाय रमत रहै, चित्त न अनतै जाई ॥३॥
सिखि पढ़ि फूलि भूलिगे बहुतै, करै बिबाद अधिकाई।
अस कलि-भक्त पुजावे खातिर, परहिं नरक महँ जाई ॥४॥
बहुतक पंडित सन्दी ज्ञानी, जहँ तहँ आपु पुजाई।
भजहिं न नाम रंग नहिं रातहिं, कहि औरन समुझाई ॥५॥
भेख अलेख कहा मैं बखानौं, मैं तैं कै प्रभुताई।
त्यागिन्ह ध्यान अपथ पथ धावहिं, लागे कर्म कमाई ॥६॥
जानि कै कानि त्याग दई सोई, लागि करै कुटिलाई।
ताहि पाप संताप भयो तेहिं, गयो है सबै नसाई ॥७॥
सब संसार अहै सब ऐसे, काहुहिं चेत न आई।
महा अपरबल माया बस परि, डारि दियो भरमाई ॥८॥

---

* हठ, टेक।

कोइ कोइ उबरे गुरु किरपा तैं, जुक्ति भाग तैं पाई ।
जगजीवन गृह ग्राम भवन सम, चरन रहे लपटाई ॥६॥

॥ शब्द १६ ॥

साधा मैं ज्ञान सोँ तत्त बिचारी ।
जो बूझै तौ सूझि अंध भा, जानिकै भयो अनारी ॥१॥
तीन लोक तीनिउ जब कीन्हेउ, चौथो साजि सँवारी ।
ताहि मद्ध रबि ससिगन तारे, को करि सकै बिचारी ॥२॥
आहि को कौन सबहीं महँ, नाहिं पुरुष नहिं नारी ।
बासन नाँव धरा सबही केहु, वह तो सब तैं न्यारी ॥३॥
फूटि निर्गुन तैं आयो ब्रह्मंडहि, गुन धरि भटका सारी ।
बासन बुन्द ब्रह्म वह एकै, कहत हैं न्यारी न्यारी ॥४॥
भूला सब प्रकृती सुभाव तैं, नाहीं सुद्धि सँभारी ।
जगजीवन कोइ उलटि पवन कहँ, गहि गुरु चरन निहारी ॥५॥

॥ शब्द १७ ॥

पंडित काह करै पँडिताई ।
त्याग दे बहुत पढ़ब पोथी का, नाम जपहु चित लाई ॥१॥
यह तो चार बिचार जगत का, कहे देत गोहराई ।
सुनि जो करै तरै पै छिन महँ, जेहिं प्रतीति मन आई ॥२॥
पढ़ब पढ़ाउब बेधत नाहीं, बकि दिन रैन गँवाई ।
एहि तैं भक्ति होत है नाहीं, परगट कहौं सुनाई ॥३॥
सत्त कहत हौं बुरा न मानौ, अजपा जपै जो जाई ।
जगजीवन सत मत तब पावै, उग्र ज्ञान अधिकाई ॥४॥

बिप्रन कहँ पकवान खवावहिँ, भात बरा तिथि मानी ।
आजा बाप के नाम पुकारहिं, खाइ के पेठ अघानो ॥५॥
बहुतन के जग ऐसे पच्छन*, होवै जेहिँ जस ठानी ।
पड़े अघोर नर्क माँ सोई, जिन अस कीन्हो प्रानी ॥६॥
त्यागै कुमति सुमति मन गहि रहि, बोल सदा सुभ बानी ।
जगजीवन तेहिँ हित प्रभु मानत, कबहुँ न अंतर आनी ॥७॥

॥ शब्द १५ ॥

साधो नहिँ कोइ भरम भुलाई ।
कहे देत हौं प्रगट पुकारे, राखौं नाहिँ छिपाई ॥१॥
नाम अच्छर दुइ तत्त सार है, भजै सोई चित लाई ।
यहि सम मंत्र और है नाहीं, देख्यो ज्ञान थहाई ॥ २ ॥
रटै सो अंतर गुप्त रहै जग, काहु न देइ जनाई ।
अपने भाय सुभाय रमत रहै, चित्त न अनते जाई ॥३॥
सिखि पढ़ि फूलि भूलिगे बहुतै, करै बिबाद अधिकाई ।
अस कलि-भक्त पुजावे खातिर, परहिँ नरक महँ जाई ॥४॥
बहुतक पंडित सब्दी ज्ञानी, जहँ तहँ आपु पुजाई ।
भजहिँ न नाम रंग नहिँ रातहिँ, कहि औरन समुझाई ॥५॥
भेख अलेख कहा मैं बखानौं, मैं तैं कै प्रभुताई ।
त्यागिन्ह ध्यान अपथ पथ धावहिँ, लागे कर्म कमाई ॥६॥
जानि कै कानि त्याग दई सोई, लागि करै कुटिलाई ।
ताहि पाप संताप भयो तेहिं, गयो है सबै नसाई ॥७॥
सब संसार अहै सब ऐसै, काहुहिँ चेत न आई ।
महा अपरबल माया बस परि, डारि दियो भरमाई ॥८॥

---

* हठ, टेक ।

कोइ कोइ उबरे गुरु किरपा तेँ, जुक्ति भाग तेँ पाई ।
जगजीवन गृह ग्राम भवन सम, चरन रहे लपटाई ॥९॥

॥ शब्द १६ ॥

साधो मैँ ज्ञान सोँ तत्त बिचारी ।
जो बूझै तौ सूझै अंध भा, जानिकै भयो अनारी ॥१॥
तोन लोक तीनिउ जब कीन्हेउ, चौथो साजि सँवारी ।
ताहि मद्ध रबि ससिगन तारे, को करि सकै बिचारी ॥२॥
आहि को कौन सबहीँ महँ, नाहिँ पुरुष नहिँ नारी ।
बासन नाँव धरा सबही केहु, वह तो सब तेँ न्यारी ॥३॥
फूटि निर्गुन तेँ आयो ब्रह्मंडहि, गुन धरि भठका सारी ।
बासन बुन्द ब्रह्म वह एकै, कहत हैँ न्यारो न्यारी ॥४॥
भूला सब प्रकृती सुभाव तेँ, नाहीँ सुद्धि सँभारी ।
जगजीवन कोइ उलटि पवन कहँ, गहि गुरु चरन निहारी ॥५॥

॥ शब्द १७ ॥

पंडित काह करै पँडिताई ।
त्याग दे बहुत पढ़ब पोथी का, नाम जपहु चित लाई ॥१॥
यह तो चार विचार जगत का, कहे देत गोहराई ।
सुनि जो करै तरै पै छिन महँ, जेहिँ प्रतीति मन आई ॥२॥
पढ़ब पढ़ाउब बेधत नाहीँ, बकि दिन रैन गँवाई ।
एहि तेँ भक्ति होत है नाहीँ, परगट कहौँ सुनाई ॥३॥
सत्त कहत हौँ बुरा न मानौ, अजपा जपै जो जाई ।
जगजीवन सत मत तब पावै, उग्र ज्ञान अधिकाई ॥४॥

॥ शब्द १८ ॥

ए प्रभु मैं कछु जानि न पायो ।
इहाँ तो पठयो मोहिं कौलि करि, वह सुधि मैं बिसरायो ॥१
अब सुधि भई चेत जब दीन्ह्यो, चित चरन तें लायो ।
मैं को आहुँ अहहु सब तुमहीं, तुमहीं कारन लायो ॥२॥
अब निर्बाह हाथ है तुम्हरे, मैं नहिं लखा लखायो ।
बहा जात रह्यौं अपथ पंथ महँ, सरन खींच ले आयो ॥३॥
अब अरदास सुनहु एह मोरी, तुम समरत्थ कहायो ।
जगजीवन दास तुम्हार कहावै, अनत न कतहुँ बहायो ॥४॥

॥ शब्द १९ ॥

अब मन भयो है मस्तान ।
धन्य साधू रहहि साधे, गहहि करि पहिचान ॥ १ ॥
सीस दीन्ह्यो चरन परिया, करहि सोइ बयान ।
सब्द साँचो कहत भाखे, मानु सुनि परमान ॥ २ ॥
तकत नैनन निरखि निर्गुन, रहत ताहि समान ।
नाहिं टूटत नाहिं छूटत, भरम तजि दृढ़ आन ॥ ३ ॥
अजब सतगुरु दिये जेहिं गुन, नाहिं तेहि सम आन
जगजीवन सो भयो पूरा, कहत वेद पुरान ॥ ४ ॥

॥ शब्द २० ॥

जब तें देखि भा मस्तान ।
रोम रोमं छकित ह्वैगा, करै कौन बखान ॥ १ ॥
जैसे गूँगा खाइ गुड़ को, करै कवन बयान ।
जानि सोई मानि सोई, ताहि तस परमान ॥ २ ॥

नाहिँ तन की सुद्धि ग्राहै, भूलिगा बहु ज्ञान ।
गुरू की निर्बान मूरति, ताहि माहिँ समान ॥३॥
सीस लाग्यो चरन महियाँ, सदा है गलतान ।
जगजिवनदास निरास ग्रासा, सतसँग नहिँ बिलगान ॥४॥

॥ शब्द २१ ॥

साँईं काहु के बस नहिँ होई ।
जाहि जनावै सोई जानै, तेहि तेँ सुमिरन होई ॥१॥
ग्रापुहिँ सिखत सिखावत ग्रापुहिँ, ग्रापुहि जानत सोई ।
ग्रापुहिं बरतं बिदित करावत, ग्रापुहिँ डारत खोई ॥२॥
ग्रापुहिँ मूरुप ग्रापुहिँ ज्ञानी, सब महँ रह्यो समोई ।
ग्रापुहिँ जोति ग्रहै निर्बानी, ग्रापु कहावत वोई ॥३॥
संत सिखाइ कै ध्यान बतायो, न्यारा कबहुँ न होई ।
जगजीवन बिस्वास बास करि, निरखत निर्मल सोई ॥४॥

॥ शब्द २२ ॥

साधो कठिन जोग है करना ।
जानत भेद बेद कछु नाहीँ, नाहक बकि बकि मरना ॥१॥
द्वादस ग्राँगुर पवन चलतु है, नाहिँ सिमटि घर ग्रौना ।
ना थिर रहहि न हटका मानै, पलक पलक उठि धौना ॥२॥
दुइ ग्राँगुर मौताज* रहै, तब करै एक सो गौना ।
तहाँ ग्रमूरति संत बसेरा, तेहि का होइ खिलौना ॥३॥
रहि तेहिँ साथ सनाथ करै सो, रमत रहै तेहिं भौना† ।
जगजीवन सतगुरु कै मूरति, निरखौ निर्मल ऐना ॥४॥

---

* नाप । † घर ।

॥ शब्द २३ ॥

साधो कासी अजब बनाई ।
साँईं समरथ सब रचि लीन्ह्यो, धोखा सबहिँ दिखाई ॥१॥
काया कनक बनायो पल मेँ, तेहि का अंत न पाई ।
है घट हीं केहु सूझा नाहीं, अंतहिँ अंत बताई ॥२॥
सात दीप नौखंड पिर्थवी, सिद्धन इहै लखाई ।
सात समुद्र कि लहरि तरंगैँ, पंछी पानि न पाई ।
पंछी उड़ा गयो ऊपर काँ, पानि पानि धुनि लाई ।
पायो पानी बुन्द चौंच तेँ, तिरपति प्यास न जाई ॥ ४ ॥
बैठा डार बिचार करै तहँ, तकि थिर सुधि बिसराई ।
जगजीवन अस छानि लियो जिन्ह, तिन्ह काँ जोग दृढ़ाई ॥५॥

॥ शब्द २४ ॥

साधो भले अहैँ मतवारे ।
कुत्ते पाँच किये बसि डोरी, एकौ रहत न न्यारे ॥१॥
कुत्ती पचीस ताहि सँग लागीं, ताहि संग अधिकारे ।
सबै बटोरि एक माँ बाँध्यो, साधे रहहिँ सँभारे ॥२॥
सो लै जाय गये मंडफ कहँ, जोगी आसन मारे ।
भे गुरुमुखी ताहि ढिग बैठे, महा दिप्त उँजियारे ॥३॥
पीवत असी अमर ते जुग जुग, रहत हैँ जुगुत बिचारे ।
जगजीवनदास अचल ते साधू, नाहिँ टरत हैँ टारे ॥४॥

॥ शब्द २५ ॥

बपुरा का गुनि गुनि कोउ गावै ।
जा की अपरम्पार अहै गति, अंत न कोऊ पावै ॥१॥

सेस सारद ब्रह्मा सुमिरत, संकर ध्यान लगावै ।
बिनती बिस्नु करहिँ कर जोरे, सूरति सुरति मिलावै ॥२॥
माया प्रबल बिस्तार दियो है, सब काँ नाच नचावै ।
न्यारा न्यारा नाम धरै काँ, आपु नहीं जग आवै ॥३॥
है बनाव कछु अजब तमासा, रंग में रंग मिलावै ।
जानि परत पहिचान होत तब, चरन सरन लै लावै ॥४॥
सतगुरु साहेब जब तुम सिखवा, सिखि तब परगट गावै ।
जगजीवन है चरनन लागा, अब तुम्ह नहिं बिसरावै ॥५॥

॥ शब्द २६ ॥

मन तैं पियत पियै नहिँ जाना ।
पीयत रहेसि आइ मद मातेसि, अब कस भइसि हेवाना ॥१॥
पाँच पचीस अहैं सँग बासी, ते तौ रहहिं गैबाना* ।
बाँधु पोढ़ि कै साधि सुरत तें, करु तैं गगन पयाना ॥२॥
रहु ठहराइ बहहु नहिँ कतहूँ, गुरु निरखहु निबाना ।
जगजीवनदास सदा सतसंगी, चरन रहौ लपटाना ॥३॥

॥ शब्द २७ ॥

अब मन रहहु थिर ठहराइ ।
पदुम पात्रं जैसे नीरं, नाहिँ बाहर जाइ ॥१॥
अहै मता गँभीर यह तौ, गुरू दीन्ह बताइ ।
रहहु लागे पागि तेहि तें, परहु ना बौराइ ॥२॥
आइ जे जे बसे यहि जग, पियो रस हित लाइ ।
माति केते सोइगे हैं, गुफा गये भुलाइ ॥३॥

* छिपे हुए ।

जागि चौंकि कै खैंचि लीन्ह्यो, सरन पहुँचे जाइ ।
जगजीवन निर्बान सतगुरु, मिले तेहिं लपटाइ ॥४॥

॥ शब्द २८ ॥

एहु मन खोट छोट न होइ ।
जात पल छिन धाइ जहँ तहँ, नाहिं मानत सोइ ॥१॥
जहाँ बहु हित नीक लागत, बिलम तहवाँ होइ ।
त्यागि मूरति भूलि सूरति, देत ध्यान बिगोइ ॥२॥
मैं न मरत तैं पहिरि धागा, मातु गर्भै सोइ ।
सयन* साथहिं लिहे पाछे, नाहिं जानै कोइ ॥३॥
मरै मंत्र तें धुआँ लागै, जाय बरतन खोइ ।
जगजिवन निर्गुन देखि निर्मल, रह्यो ताहि समोइ ॥४॥

॥ शब्द २९ ॥

साँईं अब मोहिं दाया कीजै ।

बहुत खोजी खोज कीन्हे, दीन्ह केहु लखाय ॥२॥
जिन्ह लखा तिन्ह लखा, नाहीं परत नीचे आय ॥३॥
पाइ कर्त्तं करत है उहँ, रहत नाहीं पाय ॥४॥
लीन्ह खैंचि कै एँचि सरनं, देत नाहिं बहाय ॥५॥
जगजीवन गुरु किये दाया, नाहिं तजि बिलगाय ॥६॥

॥ शब्द २१ ॥

साधो मन भजहु सच्चा नाम ।
झूँठि दुनियाँ झूठि माया, परि झूठे धन धाम ॥ १ ॥
झूठि संगत जगत की, परपंच काम हराम ।
परपंच पारस भजन बिगरत, होत नहिं सिध काम ॥ २ ॥
पाँच और पचीस गहि, नित नेम करि संग्राम ।
जगजिवनदास गुरु चरन गहि, सत सूकृतं धन धाम ॥ ३ ॥

॥ शब्द ३२ ॥

साँईं तुम समरतथ हमारे ।
हम तौ तुम्हरे दास कहावत, हमहिं न रहहु बिसारे ॥१॥
जो बिस्वास किहे रहे मन तेँ, तिन्ह के काज सँवारे ।
जिन जाना अपने मन नाहीं, तिन्हैं भरम तुम डारे ॥ २ ॥
जहँ जहँ भक्त को गाढ़ पर्यो है, तहँ तहँ तुरत सिधारे ।
सुखी कीन्ह बिलम नहिं लायो, तुरतहिं कष्ट निवारे ॥ ३ ॥
बहुत निवाजा* कहँ लग गाजौं, बेद पुरान पुकारे ।
जगजिवन को चरन तुम्हारे, सो अवलम्ब† हमारे ॥ ४ ॥

॥ शब्द ३३ ॥

साधो गहहु समुझि बिचारि ॥ टेक ॥
करै कोउ बिबाद निंदा, जाहु तेहिं तेँ हारि ।
मगन रहहू लगन लाये, डारि मैं तैं मारि ॥ १ ॥

---

* बख़शिश की । † सहारा ।

॥ शब्द ३८ ॥

साधो ज्ञान कथी कथि हारे।
जा को वार पार नाहीं है, जानै कौन बिचारे ॥१॥
नानक कबीर नामदेव पीपा, सब हरि के हित प्यारे।
जे जे यह रस पाइ मस्त भे, ते सब कुल उँजियारे ॥२॥
बरनत सेस सहसमुख जिभ्या, कीरति नाम पुकारे।
नाम भरोस भयो है जिन के, ते बहुतेरे तारे ॥३॥
संकर बिस्नु ताहि मन सुमिरत, ब्रह्मा बेद पुकारे।
निरगुन जोति अहै निरबानी, माया किहे बिस्तारे ॥४॥
जिन्ह काहू पर भई है दाया, राहत जगत बिसारे।
जगजीवन सतगुरु के चरनन, निरखि सीस रहि वारे ॥५॥

॥ शब्द ३९ ॥

नाम की को करि सकै बड़ाई।
जेइ जस माना तेइ तस जाना, भाग बड़े ते पाई ॥१॥
नामहिं तें बल भयो है सेसहिं, पृथिवी भार उठाई।
सदा मगन मस्तान रहत है, कबहुं नाहिं गरुवाई ॥२॥
हनूमान लछिमन औ भारत, नामहिं कै प्रभुताई।
बिस्नु बिरंचि सिव नामहिं तें अस, केउ न सकै गति गाई ३
चारिहु जुग महँ नामहिं तें अस, अब सो सब्द बताई।
साधो सत्तनाम है साँचा, मन भजु तजि गफिलाई ॥४॥
नामहिं सब जल थल महँ व्यापित, दूसर कहिय न जाई।
जगजीवन सतगुरु के चरन गहि, सत्तनाम लौ लाई ॥५॥

॥ शब्द ४० ॥

नहिं भरमावहु बारम्बार।
बहुत दुख मन समुझि आवत, करत अहौं बिचार ॥१॥

कठिन सागर अहै नौका, कैसे उतरौं पार ।
चरन की मैं रहौं सरनन, तुमहिं खेवनहार ॥२॥
चहहु करहू होय सोई, कौन बरजनहार ।
अहहु बड़े समर्थ साहेब, सर्ब सकल पसार ॥३॥
कर्म भर्म अघ मेटि कै, जन जानिये हितकार ।
जगजीवन निरखाइये, मैं अहौं निरखनहार ॥ ४

॥ शब्द ४१ ॥

तुमहीं सोँ चित लागु है, जीवन कछु नाहीं ।
मात पिता सुत बंधवा, कोउ संग न जाहीं ॥१॥
सिद्धि साध मुनि गंध्रबा, मिलि माटी माहीं ।
ब्रह्मा बिस्नु महेस्वरा, गनि आवत नाहीं ॥२॥
नर केतानि को बापुरा, केहि लेखे माहीं ।
जगजीवन बिनती करै, रहै तुम्हरी छाँहीं ॥३॥

॥ शब्द ४२ ॥

प्रभु जी कहौं मैं कर जोरि ।
मैं तौ दास तुम्हार आहौं, सुरति दृढ़ करु मोरि ॥१॥
इत उत कतहूँ चलै नाहीं, रहै लागी डोरि ।
पास दासहिं राखु अपने, कौन सकि है तोरि ॥२॥
रह्यौ चित्त समोइ सत महँ, भई दाया तोरि ।
रूप सोइ अनूप मूरति, रह्यो नैना हेरि ॥३॥
देखि छबि कहि जात नाहीं, सुरत सत भइ चेरि ।
जगजीवन बिस्वास करि कहु, अगम गति तेहिं फेरि ॥४

॥ शब्द ४३ ॥

साँईं तुम ब्रत पालनहारे ।
जे जे आस तुम्हारी राखे, तिनहिं न रहहु बिसारे ॥१॥

॥ शब्द ४८ ॥

जग दै पीठ दृष्टि वहि लाव ।
करि रहु बास पास उनहीं के, अनत न कतहूँ चित्त बहाव ॥१॥
जैसी प्रीति चकोर कि ससि तें ,पलक न टारत इकटक लाव।
ऐसी रहै रात दिन लागी, दुविधा कबहूँ ना लै आव ॥२॥
लोक बड़ाई कीरति सोभा, गुन औगुन बिसराव ।
सीतल दिन सदा ह्वै रहिये, दुनियाँ धंध बहाव ॥३॥
परपंची पाँचौ नित नाचिहँ, इन को है अरुझाव ।
छूटत नाहिँ पड़े सब फाँसी, करि को सकै उपाव ॥४॥
सतगुरु चरन सरन जे रहिगे, तिन्ह का भयो बचाव ।
जगजीवन सो न्यारे जग तें, सुभ सधि भयो बनाव ॥५॥

॥ शब्द ४९ ॥

तुम तें करै कौन बयान ।
रह्यौ सब महँ व्यापि जल थल, दूसरो नहिँ आन ॥१॥
ख्याल हाल अपार लीला, कहा बरनै ज्ञान ।
कियौ किरपा छिनहिँ माँ जेहिँ, भयो अंतरध्यान ॥२॥
सेस सम्भू बिस्नु ब्रह्मा, नाम सत्त बखान ।
लागि डोरी जोति को वहि, नाहिँ कोउ बिलगान ॥३॥
सदा यहि सतसंग बासा, कियो अब पहिचान ।
जगजिवन गुरु के चरन परि कै, निरखि तकि निरबान ॥४॥

॥ शब्द ५० ॥

दुनियाँ रोइ रोइ गोहरावै ।
साँईं छाँड़ि दीन्ह तुम रच्छा, जिय माँ दरद न आवै ॥१॥
वे अकीन आहै सब दुनियाँ, बहु अपकर्म कमावै ।
तेहि तें दुखित भई सब दुनियाँ, नीचे नीर बहावै ॥२॥

जानत है घट घट कै बासी, को कहि के गोहरावै ।
कपटी कुटिल हीन बहु बिधि तैं, तुम तैं कौन छिपावै ॥३॥
मैं का विनय करौं गुरु तुम तैं, करहु सो तस मन भावै ।
जगजीवन के साँईं समरथ, सीस चरन तर नावै ॥४॥

॥ शब्द ५१ ॥

साँईं निर्मल जोति तुम्हारी ।
आयो दृष्टि जबै जिन्ह देखा, किरपा भई तुम्हारी ॥१॥
तीरथ ब्रत औ दान पुन्न करि, करि कै तपस्या हारी ।
जब करि थक्यौ सस्यौ नहिं एकौ, नाहिं मिटी अँधियारी ॥
जेहिं बिस्वास बढ़ाय दियो जस, सो तस भा अधिकारी ।
तैसे रूप अनूप सँवास्यौ, तेइ तस लायो तारी ॥३॥
जोगी जती सिद्ध साधन घट, जहँ जस तहँ तस वारी ।
जगजीवन सतगुरु साहेब की, सूरति की बलिहारी ॥४॥

॥ शब्द ५२ ॥

साधो एक जोति सब माहीं ।
अपने मन विचारि करि देखो, और दूसरो नाहीं ॥१॥
एक रुधिर इक काया आहै, बिप्र सुद्र कोउ नाहीं ।
कोउ कहै नर कोऊ कहै नारी, गैबी पूरुष आहीं ॥२॥
कहुँ गुरु ह्वै कै मंत्र सिखावै, कहूँ चेला ह्वै स्रवन सुनाही ।
कतहूँ चेत हेत की बातैं, कतहूँ भ्रमै भुलाही ॥३॥
कहूँ निरबान ध्यान महँ लाग्यो, कतहूँ कर्म कमाही ।
जो जस चहै चलै तेहि मारग, तेहिं के सतगुरु आहीं ॥४
सब्द पुकारी प्रगट ह्वै भाषौं, अंतर राखौं नाहीं ।
जगजीवन जोती वह निर्मल, बिरले तिन की छाहीं ॥५॥

॥ शब्द ५३ ॥

साधो जानि कै होइ अजाना ।
रहै गुप्त अंतर धुनि लाये, तिन हीं तौ कछु जाना ॥१॥
तजि चतुराई कपट रीति मन, दूसर नाहीं जाना ।
एक तें टेक लगाय रहे हैं, दूसर नाहीं आना ॥२॥
मान गुमान दूरि करि डार्यो, दिनताई हिये आना ।
सब्द कुसब्द केतौ कोउ बोलै, सब कै करि सनमाना ॥३॥
हारि रहै जीतै नहिं केहू तें, भयौ सिद्ध निमाना ।
जगजीवन सतगुरु की किरपा, चरन कमल धरि ध्याना ॥४॥

॥ शब्द ५४ ॥

ऐसे साँईं की मैं बलिहरियाँ री ।
ए सखि संग रंग रस मातिउँ, देखि रहिउँ अनुहरियाँ री ॥१॥
गगन भवन माँ मगन भइउँ मैं, बिनुदीपक उजियरियाँ री ।
झलकि चमकि तहँ रूप बिराजै, मिटिगे सकल अँधेरियाँ री ॥२॥
काह कहौं कहिबे की नाहीं, लागि जाहि मन महियाँ री ।
जगजीवन वह जोती निरमल, मोती हीरा वारियाँ री ॥३॥

॥ शब्द ५५ ॥

हम कहँ दुनियाँ कहि समुझावै ।
जानि बूझि कै करै सयानी*, तेहि तें पार न पावै ॥१॥
सीतल ह्वै कै नवै आइ कै, बहु बिधि भाव सुनावै ।
निंदा करै फेरि बहु बिधि तें, राम कानि नहि आवै ॥२॥
कोउ कहै भिच्छुक कोउ कहै भगलो, अपकीरति गोहरावै ।
देखत राम सुनत है कानन, ताकि तेहिं तस पहुँचावै ॥३॥

---

* चालाकी ।

कहत अहै सब्द यह साँचा, करै जा तस पावै ।
जगजीवन के साँईं समरथ, सीस चरन तर नावै ॥४॥

॥ शब्द ५६ ॥

नाम बिना गे जन्म गँवाय ।
भजबँ होय भजहु नर प्रानी, कहत सब्द गोहराय ॥१॥
रावन कौरौ कंस औ कच्छप, तेऊ गये बिलाय ।
गर्ब गुमान किहिनि दुइ दिन का, अंत चले पछिताय ॥ः
अंध धुंध मा बाप रुवै* रे, बहुरि नहीं अस अवसर पा
जगजीवन यह भक्ति अचल है, जुग जुग संतन कीरति गा

॥ शब्द ५७ ॥

बूसी† राजा बूसी राव, बूसी का है सबै बनाव ॥१॥
बूसी राजा राज करावै, बूसी दर दर भीख मँगावै ।
बूसो तेनी भये अमीर बिन बूसी के भये फकीर ॥२॥

॥ दोहा ॥

बादसाह बूसीहिं तें, बूसिहिं सब संसार ।
जगजीवन बूसी नहीं, जिनके नाम अधार ॥३॥
बूसी राजा बूसी परजा, बूसी क अहै पसार ।
जगजीवन के बूसी नाहीं, केवऊ नाम अधार ॥४॥

॥ शब्द ५८ ॥

साँईं अब मैं काह कहौं ।
जानत तुमहिं जनावत तुम्हीं , राखहु तैसे रहौं ॥१॥

---

* रोवै । †भूसी या तुस ।

जल थल जीव जंतु नर नारी, मारग चलै जो चहौ ।
पूजत कहूँ पुजावत काहूँ, सुमन कहूँ अभाव कहौं* ॥२॥
कहुँ दुख दारिद दरद निर्दया, सुख धन धाम लहौ ।
काहूँ कुमति सुमति जड़ मूरुख, काहूँ ज्ञान गहौ ॥३॥
काहूँ पंडित खंडित कबितं, बहु बातैं चुप्प अहौ ।
काहूँ दुष्ट कुटिल कूकरमी, कहुँ सुभ ह्वै निबहौ ॥४॥
कहुँ दाता कहुँ कृपिन कीट सम, कहुँ थिर जात बहौ ।
अस नाचत सब नाच नचावत, जहँ जस तैसे अहौ ॥५॥
कहौं कर जोरि मोरि यह सुनिये, चरन कि सरनहिं रहौं ।
जगजीवन गति अगम तुम्हारी, दासन दास अहौं ॥६॥

॥ शब्द ५६ ॥

साधो देखत नैनन साँई ।
अस कोउ अपने मनहिं न बूझै, पैसौ कौनिउ नाहीं† ॥१॥
सुनत स्त्रवन पपील‡ की बानी, तिन तें का गोहराई ।
अस मन मुगुध अहै मद माता, करत अहै चतुराई ॥२॥
धरती गगन भानु ससि तारा, छिन महँ लियो बनाई ।
निर्मल जोति बहुत विस्तारा, जहाँ तहाँ छिटकाई ॥३॥
पवन में पवन पानि महँ पानी, दूजा रंग बनाई ।
अगिन मैं अगिन बास महँ बासा, अस मिल ना बहराई ॥४॥
भा जहँ जैसे करी बंदगी, जोति मैं जोति मिलाई ।
जगजीवन ऐसे सतगुरु के, चरनन की बलि जाई ॥५॥

---

* कहीं अच्छा भाव और कहीं बुरा भाव। † ऐसा कोई न समझै कि कोई मालिक मौजूद नहीं है। ‡ चींटी।

॥ शब्द ६० ॥

साधो की कहि काहि सुनावै ।
आपुहिं कहत सुनत है आपुहिं, सब घट नाच नचावै ॥१॥
ज्ञानी आपु आपु है ध्यानी, आपुहिं मंत्र सिखावै ।
आपुहिं परगट सबहिं दिखावत, आपुहिं गुप्त छपावै ॥२॥
देखत निरखत परखत आपुहिं, निरमल जोति कहावै ।
जेहि काँ चहै खैंच लै राखै, काहुइँ दूरि बहावै ॥३॥
जोगी आपु आपु रस-भोगी, आपुहिं भोग लगावै ।
आपु लच्छमी परसत आपुहिं, आपुहिं आपु सा पावै ॥४॥
लिप्त नाहिं अलिप्त रहत है, ज्यौं रबि जोति समावै ।
जगजिवनदास भक्त है आपुहिं, कहै सो जस मन भावै ॥५॥

॥ शब्द ६१ ॥

साधो अब मैं ज्ञान विचारा ।
निरगुन निराकार निरबानी, तिन्ह का सकल पसारा ॥१॥
काया धरि धरि नाचत आहै, बभ्फे करम के जारा ।
बिनु सत डोरी जोग नहिं छूटे, कैसे होवे न्यारा ॥२॥
कृपा कीन्ह जेहिं सुद्धि सम्हास्यो, उलटि कै दृष्टि निहारा ।
सब संसार चित्त तें बिसरे, पहुँचे सो दरबारा ॥३॥
निरगुन आहि गुन धस्यो आइ कै, राम भयो संसारा ।
जगजीवन गहि नाम उतरि गे, सतगुरु चरन अधारा ॥४॥

॥ शब्द ६२ ॥

दीनता सम और कछु नाहीं, तजि दे गर्व गुमान ।
रह्यो दीन अधीन ह्वै कै, सो सब के मन मान ॥१॥

दीन तेँ कंचन कोटि भयो है, कहे देत हौँ ज्ञान ।
गर्व गुमान कीन जब रावन, मारि कियो घमसान ॥२॥
बिभीखन जब दीन भयो है, ताहि कियो परधान ।
दीन समान और कछु नाहीं, गावत बेद पुरान ॥३॥
रहे अधीन नामहीं गहि कै, पंडो भे बलवान ।
कौरी दीन तेँ प्रभुता पायो, गर्ब तेँ खाक समान ॥४॥
दीन तेँ कंस महा बल भयऊ, तबहिँ गर्ब मन आन
केस पकरि के तिन काँ मार्यो, सो सब के मन मान ॥५॥
हिरनाकच्छप दीन भयो जब, दीन्ह्यो सब बरदान ।
जब अहंकार कीन भक्तन तेँ, मार्यो कृपा-निधान ॥६॥
होहु दीन हंकार करै जो, सो अंतर पछितान ।
राजा रंक छत्रपति दुनियाँ, गनौँ कौन केतान ॥७॥
दौलत धान औ माया पायो, बार बार चित तेँ बिलगान ।
जगजिवनदास नाम भजु अंतर, चरन कमल धरि ध्यान॥८॥

॥ शब्द ६३ ॥

साधो रटत रटत रट लाई ।
अमृत नाम रहो रस चाखत, हिय माँ ज्ञान समाई ॥१॥
मधुर मधुर चढ़ि चल ऊँचे काँ, फिर नीचे काँ आई ।
फिर ऊँचे चढ़ि थिर ठहराना, पास बास भे जाई ॥२॥
छुट्यो नाम मुकाम भयो दृढ़, निर्गुन जोति तहँ छाई ।
जगजीवन परगास उदित है, कछु गति कही न जाई ॥३॥

॥ शब्द ६४ ॥

साधो जग की कौन विचारै ।
उत्तम होय रती भरि काहू, सो कहि वहुत पुकारै ॥१॥

जो मध्यम करतव्य कर्म करि, सो मनहीं मँ विचारै।
परगट कहे असोभा मानै, रामहिं कहि कै अभारै* ॥२॥
करत है राम जबून भला, हम बपुरा कौन सँवारै।
अस नर नारी देखि परत हैँ, सुमति हिये तेँ डारै ॥३॥
जो उपदेस बेद पढ़ि देवै, समुझाये नहिँ हारै।
सुमति न आनै नाम न जानै, मैँ ममता नहिं मारै ॥४॥
बेधत नहिं अनबेधा सब है, सुनि सूरति न सम्हारै।
जगजीवन साधू अस जग महँ, दरसन नैन निहारै ॥५॥

॥ शब्द ६५ ॥

साधो जग की कहौँ बखानी।
जेहि तेँ जाइ होइ कहैँ तेहि तेँ, कहहिँ लाभ काँ हानी ॥१॥
खल† तेँ प्रीत महा हित मानहिँ, संत देखि अभीमानी।
कुटिल कि अस्तुति बहुते बिधि तेँ, भक्त कि निंदा ठानी २॥
भक्तन कहैँ कि महा अबल हैँ, हम हैँ बहु बलवानी।
दाता जिन्हैँ अदत्त‡ कहैँ तेहिँ, हम तेँ कोऊ न दानी ॥३॥
जानत अहैँ कुकर्म करत हैँ, गे ज्यौँ धूर उड़ानी।
जगजीवन मन चरन कमल महँ, निरखत निर्मल बानी ॥४॥

॥ शब्द ६६ ॥

जो पै भक्ति कीन्ह जो चहै।
अपजा जपत रहै निसु बासर, भेद प्रगट नहिँ कहै ॥१॥
जगत भाव सुभाव देखि चलि, गुप्तहिँ अंतर रहै।
ऐसी प्रीति रीति मन लावै, सुख आनँद तब लहै ॥३॥

---

* हलका होय अर्थात संतोष करै। † दुष्ट। ‡ सूम।

बहु अचार नहिं करै डिंभ कछु, सहजै रहनी रहै ।
मुसलमान जे भये औलिया, लाइ भोग कब रहै ॥३॥
अंतर माँ अंतर कछु नाहीं, पाइ भोग सो रहै ।
बंदा खात खात सो साँई, दूसरि गति को कहै ॥४॥
देत अहौं उपदेस कहे मैं, जो वहि नामहि चहै ।
जगजीवन वै साहब ह्वैगे, सदा मस्त जो रहै ॥५॥

॥ शब्द ६७ ॥

मोहिं न जानि परत गति तोरी, केतिक मति साँईं है मोरी १
महा अपरबल माया तोरी, अब दृढ़ करिये सूरति मोरी २
करहु कृपा तुम दास कै जानी, हित करि लै भव बंधन छोरी ३
चरनन लागि रहै चित मोरा, जानि दास प्रभु मोहिं तन हेरी ४
जगजीवन अरदास* सुनावै, छबि देखत रहुँ कबहुँ न तोरी† ५

शब्द ६८ ॥

अब मैं कहौं का गति तोरि ।
चहौ सो करहु होइ पै सोई, है केतान मति मोरि ॥१॥
चाँद सुरजगन गगन तीनि महँ, सब नाचत एक डोरि ।
एत‡ बिस्तार पसार अंत नहिं, लाइ एक तें जोरि ॥२॥
काहू कुमति सुमति परमारथ, कहुँ बिष अमृत घोरि ।
कहुँ ह्वै साह सूम ह्वै बैठत, कहूँ करत है चोरि ॥३॥
कहुँ तप तीरथ बरत जोग करि, कहुँ बंधन कहुँ छोरि ।
कहूँ पराग§ कहै कछु नाहीं, कहूँ कहै मोरि मोरि ॥४॥
छूछे भरे अहौ सब तुमहीं, देइ कौन को खोरि ।
जगजीवन काँ सरनै राखहु, चरन न टूटै डोरि ॥५॥

---

* अरज़ी। † न टूटै। ‡ इतना § वैराग।

॥ शब्द ६९ ॥

कलि महँ कठिन बिबादी भाई ।
कानि संत की मानत नाहीं, मन आवै तस गाई ॥१॥
सुधि नाहीं कछु आगिल पाछिल, औरहिँ कहै चेताई ।
भ्रमत फिरहि दुनियाँ के धंधे, जोरि गाँठि बकताई ॥२॥
देखि सिखहि सो करहि जाइ कै, नाम तेँ प्रीति न लाई ।
ऐसी रीति भाव करि भूले, परे नरक महँ जाई ॥३॥
कहुँ विद्या पढ़ि सब्द साखी, जहाँ तहाँ गोहराई ।
दाम काम रस बस निसु बासर, रचि बहु भेष बनाई ॥४॥
करि कै स्वाँग पुजावहिँ सब तेँ, नहि बिबेक करि जाई ।
बिज्ञानी ज्ञानी कबिता भे, नाम दीन्ह बिसराई ॥५॥
परिहैँ महा मोह की फाँसी, छोरि तोरि नहिँ जाई ।
ज्योँ बंसी गहि मीन लीन भे, मारि काल लै खाई ॥६॥
सहजहिँ अजपा जपै निरंतर, भेद न कहै सुनाई ।
जगजीवन गुरुमुख सत सन्मुख, चरन गहौ लिपटाई ॥७॥

॥ शब्द ७० ॥

बरनि न आवै मोहिँ, राम नाम पर वारी ।
सेस सारदा संकर बरनत, केतिक बुद्धि हमारी ॥१॥
सुनियत बेद गिरंथ पुकारत, जिन मति जान बिचारी ।
निरगुन निरबान रहत ही न्यारे, माया जगत पसारी ॥२॥
तीनि लोक महँ छाय रही है, को करि सकै बिचारी ।
दियो जनाइ जाहि काँ जैसे, तेइ तस डोरि संभारी ॥३॥
बैठि जाय चौगान चौक महँ, दृढ़ ह्वै आसन मारी ।
जगजीवन सतगुरु दाया तेँ, निरखि परखि नीहारी ॥४॥

॥ शब्द ७१ ॥

साँईं अजब तुम्हारी माया ॥ टेक ॥
सुर नर मुनि सब थकित भये हैं, काहू अंत न पाया ॥१॥
ब्रह्मा बिस्नु महेस सेस सब, सती सारदा गाया ॥२॥
सब परवास* निरंतर खेलहिं, जहँ जस तहाँ समाया ॥३॥
पानी नोर पहिरि सो जामा, तहँ का नाम धराया ॥४॥
रवि अस्थूल अहै निरबानी, किरिन सो जोति बढ़ाया ॥५॥
जगजीवन जस जानि परा है, उलटि कै ध्यान लगाया ॥६॥

॥ शब्द ७२ ॥

प्रभु मैं का प्रतीत लै आवौं ।
जो उपदेस दियो मोरे मन काँ, सोई मंत्र मैं गावौं ॥१॥
विद्या मोहिं पढ़ाय सिखायो, सो पढ़ि जगहिं सुनावौं ।
जग भावै सो करहि जाइ कै, मैं मन अनत न धावौं ॥२॥
कासी प्राग द्वारिका मथुरा, कहँ कहँ चित दौरावौं ।
जगन्नाथ मैं जानौं एकै, सो अंतर लै लावौं ॥३॥
तीनिउ चारिउ लोक पसारा, अनत कहाँ ठहरावौं ।
जगजीवन अंतर महँ साँईं, चरन नाहिं बिसरावौं ॥४॥

॥ शब्द ७३ ॥

प्रभु को हृदय खोज करु भाई ।
भटका भटका काह फिरतु है, फिरि फिरि भटका खाई ॥१॥
दुनियाँ भटकी काह फिरतु है, भेद दीन्ह बतलाई ।
घटही में है गंग द्वारिका, घटहीं देखु समाई ॥२॥

---

* परदेसी ।

तन करु मेटुकी मन की मंथानी, यहि बिधि मही* मथाई।
सत्त नाम सुधा बरतावहु, घिरत लेहु बहिराई ॥३॥
घिरत सत्त नाम की बासा, एहि बिधि जुक्ति बताई।
जगजीवन मत इहै कहत है, सहज नाम मिलि जाई ॥४॥

॥ शब्द ७४ ॥

साधो कौन कथै का ज्ञान।
जेहि का वारा पार नहीं, को करि सकै बखान ॥१॥
चाँद सुरज गन पवनहिं पानी, धरती कियो असमान।
लियो बनाय पल माँ वो साँईं, केहु घट नहिं बिलगान ॥२॥
सेस सहस जिभ्या मन सुमिरत, संकर लाये ध्यान।
ब्रह्मा बिस्नु बसत मन तेहि माँ, सो निरगुन निर्बान ॥३॥
माया का बिस्तार अहै सब, बूझै कौन हेवान।
देखत खेलत नाचत आपुहिं, आपुहिं करत बखान ॥४॥
मैं अजान केतान काहि माँ, जनवाये तें जान।
जगजीवन सत नाम गहे मन, गुरु चरनन लपटान ॥५॥

॥ शब्द ७५ ॥

सत्तनाम भजि गुप्तहिं रहै। भेद न आपन परगट कहै ॥१॥
परगट कहे सुखित नहिं होई। सत मत ज्ञान जात सब खोई ।२
गर्व गुमान त्यागि ममताई। ह्वै सीतल करि रहि दिनताई ॥३॥
पाँच पचीस एक अरुझाई। ताहि मिलत कछु बिलँब न लाई ४
जगजीवन अस कहि गोहराई। गुप्त कि बात करि प्रगट बताई ५

॥ शब्द ७६ ॥

यह मन चरन वारि डारो।
रह्यो लगाय आय सरनागति, इत उत सबै बिसारो ॥१॥

---

* मट्ठा।

रह्यो अचेत सुद्धि नहिँ आई, टूटै डोरि सँभारी ।
डोरी पोढ़ि बिलग ना होई, तँह सत मूरि बिचारी ॥२॥
रहि ठहराय किये दृढ़ आसान, निरखि कै रूप निहारी ।
जगजीवन के समरथ साहेब, तुमहीं पार उतारी ॥३॥

॥ शब्द ७७ ॥

साँईं सूरति अजब तुम्हारी ।
जेहिँ जस लागि तेई तस जानी, तिन तस गहा बिचारी ॥१॥
सो तस देखि मस्त मन ह्वैगा, कहि नहिँ जात पुकारी ।
दियो सिखै सत मंत्र मते महँ, बिसरत नहिँ अनुहारी ॥२॥
गन ससि भानु रूप तेहिँ वारौँ, ते नहिँ चरन बिसारी ।
ब्रह्मा सेस बिस्नु मन सुमिरत, संकर लाये तारी ॥३॥
जाहि भक्त पर किरपा कीन्ह्यो, कर लीन्ह्यो जग न्यारी ।
जगजीवन माया है परबल, भवजल पार उतारो ॥४॥

॥ शब्द ७८ ॥

प्रभु जी नाहिँ कछु कहि जाइ ।
जहँ तहाँ परपंच बहूतै, नाहिँ कोइ सकुचाइ ॥१॥
धर्म दाया त्यागि दीन्ह्यो, करहि बहु कुटिलाइ ।
चेत नहिँ कोउ करत मन तेँ, गयो सब गफिलाइ ॥२॥
जहाँ तहाँ बिबाद ठानहि, भिड़हिँ वृष की नाँइ* ।
कहा कछु दिन सुःख भुगतैँ, अंतहूँ दुख पाइ ॥३॥
जहाँ सुमिरन करत कोई, बैठि तहवाँ आइ ।
देत ध्यान बिगारि छिन महँ, अवरि बात चलाइ ॥४॥

---

* साँड़ की तरह लड़ते हैं ।

देखि सुनि मोहिँ परत ऐसे, कलि कि प्रभुता आइ ।
करै जो जस जाइ भुगुतै, कोइ न कहुँ गति पाइ ॥५॥
पार उतरहि उबरि बिरला, सुमति जेहि मन आइ ।
जगजीवन बिस्वास करि रहु, सुरति चरनन लाइ ॥६॥

॥ शब्द ७९ ॥

राम नाम बिना कहौ कैसे को तरिहै ॥टेक ॥
कठिन भरम सागर परि, जग्त का उबरिहै ।
आवत है मोहिँ अँदेस, कठिन है बिदेस, काह करिहै ॥१॥
लागहिँ नहिँ कोउ साथ, आइहि नहिँ कोउ काम,
जम की फाँसि परिहै ।
खाइ लेहै जमदूत कोऊ, खोज काहु नाहिँ पैहै ॥२॥
सत सुकिर्त नाम भजु, संकट बिकट तेँ बचिहै ।
जगजिवन प्रकास जोति, निर्मल गुरु चरन सरन रहिहै ॥३॥

॥ शब्द ८० ॥

साधो भजहु नाम मन लाई ।
दुइ अच्छर रसना रट लावहु, कबहूँ मन तेँ नहिँ बिसराई ॥१॥
मन मेँ फूलि भूलि धन माया, अंत चले पछिताई ।
काया कोट अंतर रहु थिर ह्वै, बाहर चित्त कबहुँ नहिँ जाई ॥२॥
यहि रहि जुक्ति जक्त करि बासा, सर्ब बिकार दूर ह्वै जाई ।
जगजीवन जो चरन गहा जिन, ताहिँ काल तेँ लेहिँ बचाई ॥३॥

॥ शब्द ८१ ॥

जग की रीति कही नहिँ जाई ॥ टेक ॥
मिलहिँ भाव करि कै अधीन ह्वै, पाछे करि कुटिलाई ।
माला कंठी पहिरि सुमिरनी, दीन्ह्यो तिलक बनाई ॥१॥

करहिँ विवाद बहुत हठ करि कै, परहिँ भरम माँ जाई।
कहहिँ कि भक्त सिद्ध है निपटिन्ह*, बहु बकबाद बढ़ाई॥२॥
अंतर नाम भजन तेहिँ नाहीं, जहँ तहँ पूजा लाई।
जगजिवनदास गुप्त मति सुमिरहु, प्रगट न देहु जनाई॥३॥

॥ शब्द ८२ ॥

नाम मंत्र तत्त सार लीजै भजि सोई॥टेक॥
करि कै परतीत नित्त बिलग नाहिँ होई।
डोरि पोढ़ि लागि रहै तूरै† नहिँ कोई॥१॥
लियो बिचारि वेद चारि मथि कै मन सोई।
पोथी औ पुरान ज्ञान कहत बेद जोई॥२॥
होवै निर्बान कर्म भर्म मैल धोई।
अजपा जप लागि रहै निरमल तब होई॥३॥
ऐसी जुक्ति जक्त रहै दुबिधा कहँ खोई।
जगजीवन भेँटु गुरू सत्त, बिलग नाहिँ होई॥४॥

॥ शब्द ८३ ॥

साधो जग बिरथा बातैं करही।
साध तेँ मिलहिँ कपट मन कीन्हे, बातैँ औरै करहीं॥१॥
पकरैँ पाँव भाव करि बहु बिधि, पाछे निंदा करहीं।
भयो पाप कर्म कहँ प्रापति, घोर नरक माँ परहीं॥२॥
साँचा नाम कहहि ते झूठा, भरम भुलाने फिरहीं।
अस हम परखि नैन तेँ देखा, सुभ कारज नहिँ सरहीं॥३॥
इत उत की बातैँ कहि भाखहिँ, सुधि नाहीं घट धरहीं।
जगजीवन रहु चरन ध्यान धरि, जिहिँ हित सो तस चहहीं॥४॥

---

* निवृत हो गये। † तोड़े।

॥ शब्द ८४ ॥

डोरि पोढ़ि लाय चित्त अंते नहिं जाई ।
पाँच औ पचीस साथ, देत हैं भ्रमाई ॥१॥
ऐसी जुक्ति करहु एक, एक हीं चलाई ।
मन मतंग मारि दे तैं, तोरि दे मिताई ॥२॥
नीच होहु नीच जानि, ऊँचेहु चढ़ि धाई ।
सब कहँ लै बाँध डारु, दुनियाँ बिसराई ॥३॥
सतगुरु सरूप रूप, निरखहु निरथाई ।
जगजीवन पास बास, थिर रहु ठहराई ॥४॥

॥ शब्द ८५ ॥

चरनन पै मैं वारी तुम्हारी ।
भ्रमत फिर्‌यौं कछु जानत नाहीं, ज्ञान तैं कछु न बिचारी ॥१॥
जो मैं कहौं कहा बसि मोरी, आहै हाथ तुम्हारी ।
सुन्यौं गरंथ संत कहि भाष्यो, अनगन लीन्ह्यो तारी ॥२॥
सुनि प्रतीत होत मन मोरे, जब भै कृपा तुम्हारी ।
जगजीवन कि अरज सुनि लीजै, तुम सब लेहु सँवारी ॥३॥

॥ शब्द ८६ ॥

तुम सौं यह मन लागा मोरा ।
करौं अरदास इतनी सुनि लीजै, तको तनक मोहिं कोरा ॥१॥
कहँ लगि औगुन कहौं आपना, कामी कुटिल औ
लोभी चोरा ।
तब के अब के बहु गुनाह भे, नाहिं अंत कछु छोरा ॥२॥
साँइं अब गुनाह सब मेटहु, चितै आपनी ओरा ।
जगजीवन कै इतनी विनती, टूटै प्रीति न डोरा ॥३॥

॥ शब्द ८७ ॥

जा पर भयो राम दयाल।
दरस दे कर्म मेटि डारयौ, तुरत कीन्ह निहाल॥१॥
निर्बान केवल भयो अम्मर, गयो कटि भ्रम जाल।
दुःख दूरि दुबिधा सुःख दै, जन जानि करि प्रतिपाल॥२॥
भक्त काँ जब कष्ट ब्याप्यो, धाइ आयो हाल।
दुष्ट केर बिनास कीन्ह्यो, त्रास मानी काल॥३॥
ऐस आपन दास जानत, मातु के ज्यौं बाल।
जगजीवन गुरु रूप अमृत, नयन पियहु रसाल॥४॥

॥ शब्द ८८ ॥

साँईं अब सुन लीजे मोरी।
तुम जानत घट कै सब की मति, तुम तेँ करौँ न चोरी॥१॥
प्रीति लगाय राखिये निसु दिन, कबहुँ न तोरहु डोरी।
मोहिं अनाथ के नाथ अहौ तुम, किरपा करि कै हेरो॥२॥
करि दुख दूरि देहु सुख जन कहँ, केतिक बात है थोरी।
जब जब धाय दास पहँ आयो, जब सुनाय कै टेरी॥३॥
जन काजे जग आय देँह धरि, मार्‍यो दैत घनेरी।
करि सुखि पलहिँ एक छिन माहीँ, राम दोहाई फेरी॥४॥
कहौँ काह कहिबे की नाहीँ, सीस चरन तर मेरी।
जगजीवन के साँईं समरथ, अब किरपा करि हेरी॥५॥

॥ शब्द ८९ ॥

आनँद के सिंध मेँ आन बसे, तिन को न रह्यो तन को तपनो।
जब आपु मेँ आपु समाय गये, तब आपु मेँ आपु लह्यो अपनो॥

जब आपु मैं आपु लह्यो अपुनो तब अपनो हो जाप
रह्यो जपनो।
जब ज्ञान को भान प्रकास भयो, जगजीवन होय
रह्यो सपनो॥

॥ शब्द ९० ॥

साहेब मोहिं गुन एकौ नाहीं।
औगुन बहुत महा अघ लादे, तातें सूझत नाहीं ॥१॥
काया कोटि नर्क को आहे, बसत अहौं तेहि माहीं।
तस्कर* संग भंग मति मोरो, रहत अहौं तेहि माहीं ॥२॥
झगरा करत रात दिन छिन छिन, कहत हैं रहु हम माहीं।
मैं तो चहौं रहौं चरनहिं सँग, एइ राखत हैं नाहीं ॥३॥
करु दाया तब होहि छिमा एइ, सीतल रहौं छबि छाहीं।
जगजीवन की बिनती इतनी, आदि अंत कै तुम्हरै आहीं ॥४॥

॥ शब्द ९१ ॥

सतगुरु मैं तो तुम्हार कहावौं।
तुम काँ जानौं तुम काँ मानौं, अवर न मन लै आवौं ॥१॥
तन औ धाम काम तुमहीं तें, तुम काँ सीस नवावौं।
तुमहीं तें निर्बाह हमारा, तुमहीं तें सुख पावौं ॥२॥
जब बिसरावहु तब मोहिं बिसरत, चहौ तो सरनहिं आवौं।
दाया करत जानि जन आपन, तब मैं ध्यान लगावौं ॥३॥
हाथ सर्वसौ अहै तुम्हारे, केतक मति मैं गावौं।
जगजीवन काँ आस तुम्हारी, नैन दरस नित पावौं ॥४॥

*चोर।

॥ शब्द ९२ ॥

अब मैं तुम सों सुरति लगाई ।
औगुन क्रम भ्रम मेटि हमारे, राखि लेहु सरनाई ॥१॥
हौं अज्ञान अजान केति बुधि, सकौं नाहिं गति गाई ।
ब्रह्मा सेस महेस थकित भे, भेद न तिनहूँ पाई ॥२॥
सब बिस्तार पसार तुम्हारा, राख्यो है अरुझाई ।
केहु समुझाय बुझाय बतायो, काहुहि दियो बहाई ॥३॥
तुम दाता औ मुक्ता आहहु, तेम कहँ सीस चढ़ाई ।
जगजीवन की इतनी सुनिये, कबहुँ नाहिं बिसराई ॥४॥

॥ शब्द ९३ ॥

तुम्हरी गति कछु जानि न पायो ।
जेइ जस बूझा तेइ तस सूझा, ते तैसइ गुन गायो ॥१॥
करौं ढिठाई कहौं विनय करि, मोहिं जस राह बतायो ।
जस मैं गहा लहा लै लागो, चरन सरन तब पायो ॥२॥
भटकत रहेउँ अनेक जनम लहि, वह सुधि सो बिसरायो ।
दाया कीन्ह दास करि जानेहु, बड़े भाग तें आयो ॥३॥
दिये बताइ दिखाइ आपु कहँ, चरनन सीस नवायो ।
जगजीवन कहँ आपन जानेहु, अघ कर्म भर्म मिटायो ॥४॥

॥ शब्द ९४ ॥

अब सुनि लीजै विनय हमारी ।
तुम प्रभु अहहु प्रान तें प्यारे, और न कोउ अधिकारी ॥१॥
केतेउ तारेहु केते उबारेहु, हम केतानि बिचारी ।
तनिक कोर ओर हम देखहु, होहूँ तुरत सुखारी ॥२॥
सेस सहस-फनि मन सुमिरत हैं, सिव सत सुरति सुधारी ।
सनक सनंदन करहिं वंदना, गावहिं बेदो चारी ॥३॥

जल थल पवन भानु ससि गन महँ, काहु तेँ जोति न न्यारी ।
जगजीवन एइ चरन कमल तेँ, सूरति कबहुँ न टारी ॥४॥

॥ शब्द ६५ ॥

साँईं अब सुनि लीजै मोरी ।
दाया करहु दास करि जानहु, करहु प्रीति दृढ़ डोरी ॥१॥
तुम्हरे हाथ नाथ सबही को, जानत सो मति मोरी ।
जेहि करि चहहु नचावहु तेहि करि, नहिँ केहु की बरजोरी ॥२॥
ठग बटमार साह हो तुमहिँ, तुमहीँ करावत चोरी ।
दाता दान पुन्न हो तुमहीँ, विद्या ज्ञान घनोरी ॥३॥
सब महँ नाचत सबहिँ नचावत, करौ कुसब्द निबेरो ।
जगजीवन काँ किरपा करहू, निरखत रहै छबि तेरी ॥४॥

॥ शब्द ६६ ॥

साँईं तेरो करै कौन बखान ॥ टेक ॥
ज्ञान भेद बेद तुमहीँ, और कवन केतान ।
बिस्नु तुव दरबार ठाढ़े, अज्ञा मन परसान ॥१॥
चहत आहो होत सोई, अवर होत न आन ।
सेस सुमिरहि सहस मुख तेँ, धरे संकर ध्यान ॥२॥
कर्म गति जो लिखि बिधातै, तिनहुँ नहिँ गति जान ।
जगजिवन रबि ससि नेग* वारौँ, नाहिँ छबिहिँ समान ॥३॥

॥ शब्द ६७ ॥

साधो जेहिँ आपन कै लीन्हा ।
औगुन कर्म मिटायो छिन महँ, भक्ति भेद तेहिँ दीन्हा ॥१॥

---

* अनेक ।

भजत सोई बिसरावत नाहीं, रहत चरन तें लीना।
आहै अलष लख्यो तब आयो, निर्गुन सूरति चीन्हा ॥२॥
बैठि रहा मन भा सुखबासी, अनत पयान न कीन्हा।
अम्मर भयो मरहि ते नाहीं, गुप्त मंत्र मत लीन्हा ॥३॥
सतगुरु मूरति निरखि निहारहि, जैसे जलहित मीना।
जगजीवन चकोर ससि देखत, पाय भाग तें तीन्हा ॥४॥

॥ शब्द ६८ ॥

साँईं बिनती सुनु मोरी। चरन तें छुटै न डोरी ॥१॥
मैं अहौं चरन को दासा। मोहिं राखहु अपने पासा ॥२॥
मैं आहौं दासन दासा। मोहि सदा तुम्हारी आसा ॥३॥
किरपा जब भई तुम्हारी। तब आपनि सुरति सँभारी ॥४॥
तुम तजि अवर न जानौं। किरपा तें नाम बखानौं ॥५॥
तब मैं कह्यौं पुकारी। किरपा जब भई तुम्हारी ॥६॥
सब तीरथ तुमहीं कीन्हा। हम साहिब तुम कहँ चीन्हा ॥७॥
रहौं सोवत जागत लागी। से देहु इहै बर माँगी ॥८॥
मन अनत कतहुँ नहिं धावै। चरनन सें सदा लव लावै ॥९॥
जगजिवन चरन लपटाना। तुम मोहिं सिखायो ज्ञाना ॥१०॥

॥ शब्द ६९ ॥

मन तुम भजो रामै राम।
तार दीन्हो बहुत पतितन, उत्तमं अस नाम ॥१॥
गह्यो जिन परतीत करिकै, भयो तिन को काम।
मिटे दुख संताप तिन के, भयो सुख आराम ॥२॥
देखि सुख पर भूल ना तैं, दौलतं धन धाम।
अहै सब यह झूठ आसा, नाहि आवे काम ॥३॥

ढ़ौ ऊँचे नीच होइ के, गगन है भल ग्राम ।
गजिवनदास निहार मूरति, चरन कर बिस्राम ॥४॥

दोहा

म राम रट लागि जेहि, आय मिले तेहि राम ।
गजीवन तिन जनन के, सफल भये सब काम ॥

---

# शिष्यों के नाम पत्र ।

(१)

ाधो सीतल यह मन करहु । अंतर भीतर साधे रहहु ॥१॥
ुक्ति इहै दुइ अच्छर करहु । सतगुरु भेँट कीन्ह जो चहहु ॥२॥
ोध तमा* यह देहु बिसारि । राखहु अंतर डोरि सँभारि ॥३॥
मा तुनुका तेँ जोति बुझाय । कैसेहु भेँट होय नहिं जाय ॥४॥
ैन नीर बाहर नहिं आवै । बाहर आवै तो दरस न पावै ॥५॥
दा सुचित्त चित्त यह रहई । अंतर बाहर कबहुँ न बहई ॥६॥
देबीदास देउँ उपदेस । त्यागहु मन तेँ सबै अँदेस ॥७॥
जगजीवन धरि अंतर ध्यान । सीतल रहि कर भाषौ ज्ञान ॥८॥

(२)

भक्त देबीदास । मन राखहु चरन को आस ॥१॥
वै करहिं सब औसान । तुम करत रहु दृढ़ ध्यान ॥२॥
मन नाहिं व्याकुल होहु । करि रहहु चरन सनेहु ॥३॥

---

* [illegible]

( ३ )

भक्त दूलनदास । रहु सदा नाम की आस ॥१॥
मन रहहु अंतर लाय । सत सब्द कहौं सुनाय ॥२॥
गगन करु मंडान । जहँ आहि ससि गन भान ॥३॥
तहँ अलख लखि पहिचान । सतगुरू छबि निरबान ॥४॥
जगजिवन कहै विचारि । गहि रहहु नाम सँभारि ॥५॥

( ४ )

भक्त देवीदास । मन सदा चरन की आस ॥१॥
मन ज्ञान ध्यान अनंद । कटि जाहिंगे भ्रम फंद ॥२॥
सदा सुख बिसराम । चित भजत रहिये नाम ॥३॥
जगजीवन कहत है सोय । चित रहै चरन समोय ॥४॥

॥ दोहा ॥

सदा सहाई दास पर, मनहिं बिसारै नाहिं ।
जगजीवन साँचो कहै, कबहूँ न्यारे नाहिं ॥५॥

( ५ )

भक्त देवीदास । मन नाम बसि बिस्वास ॥१॥
मन करै गगन सुकास । सत दरस तें सिध काम ॥२॥
गुरु चरन तें रहु लाग । तहँ भक्ति बर ले माँग ॥३॥
निरखि है सतवार । मिटि जाय सब भ्रम जार ॥४॥
अमर जुग जुग होहु । रहु मगन करु न बिछोहु*॥५॥

॥ दोहा ॥

सत समरथ तें राखि मन, करिय जगत को काम ।
जगजीवन यह मंत्र है, सदा सुःख बिसराम ॥६॥

---

* वियोग, जुदाई ।

# साखी

मैं तैं गाफिल होहु नहिं, समुझि कै सुद्धि सँभार।
जौने घर तैं आयहू, तहँ का करहु बिचार॥१॥
काहे भूल गइसि तैं, का तोहि काँ हित लाग।
जवने पठवा कौल करि, तेहि कस दीन्ह्यो त्याग॥२॥
भूलु फूलु सुख पर नहीं, अब हूँ होहु सचेत।
साँईं पठवा तोहि काँ, लावो तेहि तैं हेत॥३॥
इहाँ तो कोऊ रहि नहीं, जो जो धरिहै देह।
अंत काल दुख पाइहौ, नाम तैं करहु सनेह॥४॥
तजु आसा सब झूठ ही, सँग साथी नहिं कोय।
केउ केहू न उबारिही, जेहि पर होय सो होय॥५॥
मारहिं काटहिं बाटहीं, जानि मानि करु त्रास।
छाँड़ि देहु गफिलाई, गहहु नाम की आस॥६॥
जगजीवन गुरु सरनहीं, अंतर धरि रहु ध्यान।
अजपा जपु परतीत करि, करिहैं सब औसान॥७॥
सत्त नाम जप जीयरा, और बृथा करि जान।
माया तकि नहिं भूलसी, समुझि पाछिला ज्ञान॥८॥
कहँवाँ तैं चलि आयहू, कहाँ रहा अस्थान।
सो सुधि बिसरि गई तोहिं, अब कस भयसि हेवान॥९॥
अबहूँ समुझि के देखु तैं, तजु हंकार गुमान।
यहि परिहार* सब जाइ है, होइ अंत नुकसान॥१०॥

---

* छोड़कर।

दीन लीन रहु निसु दिना, और सर्बसौ त्यागु।
अंतर बासा किये रहु, सहा हितु प्रीति तैं लागु ॥११॥
काया नगर सोहावना, सुख तव हीं पै होय।
रमत रहै तेहिं भीतरे, दुख नहिं ब्यापै कोय ॥१२॥
दिना चारि का पेखना, अंत रहहि कोउ नाहिं।
जानु बृथा मन आपने, कोउ काहू कर नाहिं ॥१३॥
मृत मंडल कोउ थिर नहीं, आवा सो चलि जाय।
गाफिल ह्वै फंदा पर्‍यो, जहँ तहँ गयो बिलाय ॥१४॥
जिन लेहु सुरति सँभारिया, अजपा जपि भे संत।
न्यारे भवजल सबहिं तैं, सत्त सुकृति तैं तंत ॥१५॥
जगजीवन गहि चरन गुरु, ऐनन* निरखि निहारि।
ऐसी जुगुती रहै जे, लेहैं ताहि उबारि ॥१६॥

---

* आँख से।

# शुद्धि पत्र

| सफ़ा | पंकी | अशुद्ध | शुद्ध |
|---|---|---|---|
| १ | ११ | पि | पिय |
| ३ | ६ | लानत | लागत |
| ६ | ४ | लियौ | लियो |
| ८ | ११ | अत | अंत |
| ११ | | शब्द २८ | शब्द २८ |
| ११ | १० | अंतर ध्यान | अंतर ध्यानं |
| १२ | ५ | मैं | मैं |
| १६ | ४ | कोरा | कीरा |
| २० | ७ | ठिन | ठिन † |
| २६ | ३ | द्रढ़ | द्रढ़ |
| | ४ | जगजीवन | जगजिवन |
| | १२ | द्रढ़ | द्रढ़ |
| ३२ | २ | विनती | विनतो |
| ३१ | २ | भूल | मूल |
| ३७ | १७ | अपना | आपना |
| ४४ | १२ | गगनहि | गगनहिँ |
| ४७ | १ | घटा | घंटा |
| | १५ | गागारि | गागरि |
| | २१ | दीप | दीप |
| | १ | मसताना | मसतान |
| | नोट | सुगंधा | सुगंधि |
| | १६ | धर्म | धर्म |
| | १७ | मिटी | मिटो |
| | १८ | डोलहिँ | गेलहिँ |
| | १९ | सीतल | सीतल |
| | २० | है | हैँ |
| | ६ | नगर के | नगर के |
| | | सुधि लेहि | सुधि सब लेहि |
| १२ | | सुरति | सुमति |
| १६ | | निरतो | निरती |

| सफ़ा | पंक्ति | अशुद्ध | शुद्ध |
|---|---|---|---|
| ६० | १ | गावहि | गावहिँ |
| ६२ | ११ | तुम्ह तेँ | तुम्ह तेँ |
| ,, | हेडिंग | हिँडोला | हिँडोला |
| ६४ | ६ | पैँग | पैँग |
|  | १० | भुलाउ | झुलाउ |
| ६७ | ६ | नाहि | नाहिँ |
| ६९ | २४ | यह | यहु |
| ७२ | ९ | गंवाये | गँवाये |
| ,, | ११ | गह्या | गह्यो |
| ७५ | १८ | खैँची | खैँची |
| ,, | ,, | झकाझारी | झकाझारी |
| ८१ | १० | जगजीवन | जगजीवन |
| ८ |  | करी | करी |
| ८५ |  | शब्द ६ | शब्द ४ |
| ८८ | १६ | मूरख | मूरख |
| ९५ | १ | सारद | सारदा |
| ९९ | ६ | दृष्टि | दृष्टि |
| १०४ | १४ | अंतर | अंतर ध्यान |
| १०६ | १८ | नहि | नहिँ |
| १०७ | ११ | बूसो | बूसी |
| ,, | ११ | बिन | बिन, |
| १११ | ,, | अभीमानी | अभिमानी |
| ११२ | नोट | न टूटे | † न टूटे |
| ११६ | ३ | आसान | आसन |
| १२६ | ३ | तें | तैँ |
| ,, | ५ | हों | हो |

## बेलवेडियर प्रेस, कटरा, प्रयाग की पुस्तकें

# संतबानी पुस्तकमाला

[ हर महात्मा का जीवन-चरित्र उनकी बानी के आदि में दिया है ]

## हिन्दी-पुस्तकमाला

नवकुसुम भाग १ } इन दोनों भागों में छोटी छोटी रोचक शिक्षाप्रद कहानियाँ
नवकुसुम भाग २ } संग्रहित हैं। मूल्य पहला भाग ।॥) दूसरा भाग ॥)

सचित्र विनय पत्रिका—बड़े बड़े हर्फ़ों में मूल और सविस्तार टीका है। सुन्दर जिल्द तथा ३ चित्र गुसाईं जी का भिन्न भिन्न अवस्था के हैं मूल्य सजिल्द ३)

करुणा देवी—यह सामयिक उपन्यास बड़ा मनमोहक और शिक्षाप्रद है। स्त्रियों को अवश्य पढ़ना चाहिए। मूल्य ॥=)

हिन्दी-कवितावली—छोटी छोटी सरल बालोपयोगी कविताओं का संग्रह है। मूल्य -)

सचित्र हिन्दी महाभारत—कई रंगीन मनमोहक चित्र तथा सरल हिन्दी में महाभारत की सम्पूर्ण कथा है। सजिल्द दाम ३)

गीता—(पाकेट एडिशन) श्लोक और उनका सरल हिन्दी में अनुवाद है। अन्त में गूढ़ शब्दों का कोश भी है। सुन्दर जिल्द मूल्य ।॥=)

उत्तर ध्रुव की भयानक यात्रा—इस उपन्यास को पढ़ कर देखिये। कैसी अच्छी सैर है। बार बार पढ़ने का ही जी चाहेगा। मूल्य ॥)

सिद्धि—यथा नाम तथा गुणः। अपने अनमोल जीवन को सुधारिये। मूल्य ॥)

महारानी शशिप्रभा देवी—एक विचित्र जासूसी शिक्षादायक उपन्यास मूल्य १।)

सचित्र द्रौपदी—इसमें देवी द्रौपदी के जीवन चरित्र का सचित्र वर्णन है। मूल्य ।॥)

कर्मफल—यह सामाजिक उपन्यास बड़ा शिक्षाप्रद और रोचक है। मूल्य ।॥)

दुःख का मीठा फल—इस पुस्तक के नाम ही से समझ लीजिये। मूल्य ।॥=)

कोक संग्रह अथवा संतति विज्ञान—इसे कोक शास्त्रों का दादा जानिए। मूल्य ।॥=)

हिन्दी साहित्य प्रदीप—कक्षा ५ व ६ के लिए उपयोगी है (सचित्र) मूल्य ॥=)

काव्य निर्णय—दास कवि का बनाया हुआ टीका-टिप्पणी सहित मूल्य १।)

सुमनोऽञ्जलि भाग १—हिन्दू धर्म सम्बन्धी अपूर्व और अत्यन्त लाभदायक पुस्तक है। इसके लेखक मिश्रबन्धु महोदय हैं। सजिल्द मूल्य ॥=)

सुमनोऽञ्जलि भाग २ काव्यालोचना सजिल्द ॥=)

सुमनोऽञ्जलि भाग ३ उपदेश कुसुमावली मूल्य ॥=)

(उपरोक्त तीनों भाग इकट्ठे सुन्दर सुनहरी जिल्द बँधी है) मूल्य २)

सचित्र रामचरितमानस—यह असली रामायण बड़े हरफ़ों में टीका सहित है, भाषा बड़ी सरल और लालित्य पूर्ण है। इस रामायण में २० सुन्दर चित्र, मानस-पिंगल और गोसाईं जी की विस्तृत जीवनी है। पृष्ठ संख्या १२००, चिकना काग़ज़

मूल्य केवल ६॥) । इसी असली रामायण का एक सस्ता संस्करण ११ बहुरंगा और ८ रंगीन यानी कुल २० सुन्दर चित्र सहित और सजिल्द १२०० पृष्ठों का मूल्य ४॥) । प्रत्येक कांड अलग अलग भी मिल सकते हैं और इनके कागज़ उमदा हैं ।

प्रेम-तपस्या—एक सामाजिक उपन्यास ( प्रेम का सच्चा उदाहरण ) मूल्य ॥)

लोक परलोक हितकारी—इसमें कुल महात्माओं के उत्तम उपदेशों का संग्रह किया गया है । पढ़िये और अनमोल जीवन को सुधारिये । मूल्य ॥=)

विनय कोश—विनयपत्रिका के सम्पूर्ण शब्दों का अकारादि क्रम से संग्रह करके विस्तार से अर्थ है । यह मानस-कोश का भी काम देगा । मूल्य २)

हनुमान बाहुक-प्रति दिन पाठ करने के योग्य, मोटे अक्षरों में शुद्ध छपी है । मूल्य ~)॥

तुलसी ग्रन्थावली—रामायण के अतिरिक्त तुलसीदास जी के अन्य ग्यारहों ग्रन्थ शुद्धता पूर्वक मोटे मोटे बड़े अक्षरों में छपे हैं और पाद टिप्पणी में कठिन शब्दों के अर्थ दिये हैं । सचित्र व सजिल्द मूल्य ४)

कवित्त रामायण—पं० रामगुलाम जी द्विवेदी कृत पाद टिप्पणी में कठिन शब्दों के अर्थ सहित छपी है । मूल्य ।=)

नरेन्द्र-भूषण—एक सचित्र सजिल्द उत्तम मौलिक जासूसी उपन्यास है । मूल्य १)

सन्देह—यह एक मौलिक क्रांतकारी नया उपन्यास है । बिना जिल्द ॥।) सजिल्द १)

चित्रमाला भाग १–सुन्दर मनोहर १२ रंगीन चित्रों का सग्रह तथा परिचय है । मूल्य ।॥)

चित्रमाला भाग २—सुन्दर मनोहर १२ रंगीन चित्रों का संग्रह है । मूल्य ।॥)

चित्रमाला भाग ३—सुन्दर मनोहर १२ रंगीन चित्रों का संग्रह है मूल्य १)

चित्रमाला भाग ४—१२ रंगीन सुंदर चित्र तथा चित्र-परिचय है मूल्य १)

गुटका रामायण—यह असली तुलसीकृत रामायण अत्यन्त शुद्धता पूर्वक छोटे रूप में है । पृष्ठ संख्या लगभग ४५० के है । इसमें अति सुन्दर ८ बहुरंगे और ५ रंगीन चित्र हैं । तेरहो चित्र अत्यन्त भावपूर्ण और मनमोहक हैं । रामायण प्रेमियों के लिये यह रामायण अपूर्व और लाभदायक है । जिल्द बहुत सुन्दर और मजबूत तथा सुनहरी है । मूल्य केवल लागत मात्र १॥)

घोंघा गुरू की कथा—इस देश में घोंघा गुरु की हास्यपूर्ण कहानियाँ बड़ी ही प्रचलित हैं । उन्हीं का यह संग्रह है । शिक्षा लीजिए और ख़ूब हँसिए । ।)

गल्प पुष्पाञ्जलि—इसमें बड़ी उमदा उमदा गल्पों का संग्रह है । पुस्तक सचित्र और दिलचस्प है । दाम ॥~)

हिन्दी साहित्य सुमन— दाम ॥)